ओ३म्

परिवार और समाज के नवनिर्माण का मासिक

शांतिधर्मी

मार्च, 2013

महर्षि दयानन्द और हिन्दू समाज

स्वप्न क्यों आते हैं?

क्या पुनर्जन्म होता है

विश्व की प्रथम चिकित्सा पद्धतिः आयुर्वेद

क्या भटक रहा है युवा वर्ग

शिक्षा पद्धति का आधार

₹10

ओ३म्

वैदिक संस्कृति के ध्वजवाहक, बाल ब्रह्मचारी, आदर्श संन्यासी,
आर्ष पाठविधि के प्रबल पक्षधर, कुशल चिकित्सक,
महान साहित्यकार, पुरातत्त्ववेत्ता, नवयुवकों के प्रेरणास्रोत,
गौ-रक्षक, हिन्दी रक्षा आन्दोलन के सूत्रधार,
देश-विदेश में आर्य सिद्धान्तों के प्रचारक,
आर्य समाज के नेता, स्वतंत्रता सेनानी

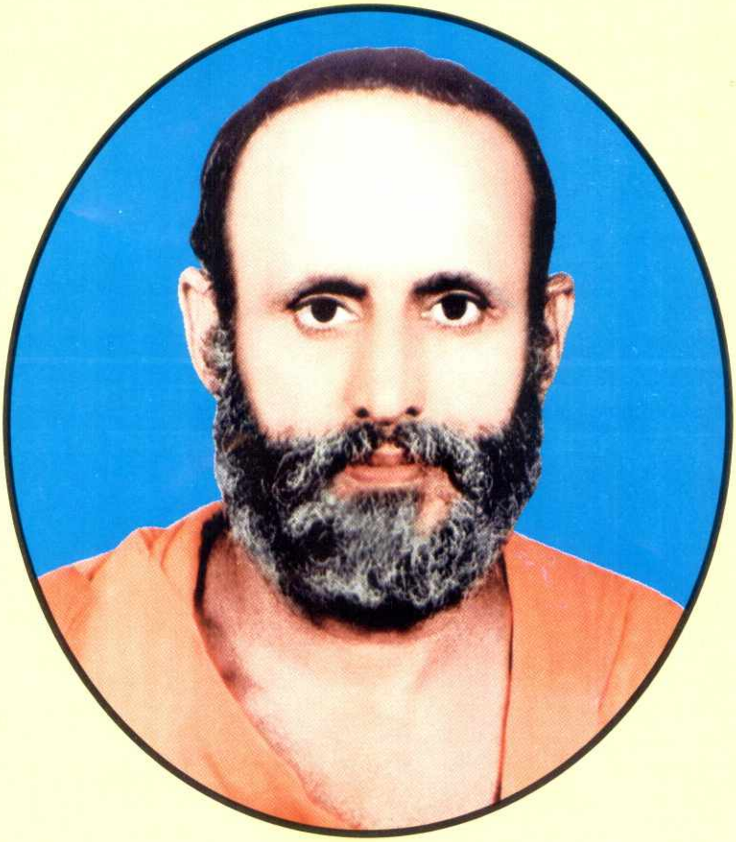

पूज्यपाद स्वामी ओमानन्द जी सरस्वती

पुण्य तिथि २३ मार्च

शान्तिधर्मी परिवार की ओर से

शत-शत श्रद्धा सुमन समर्पित।

ओ३म्

शं नो मित्रः शं वरुणः शं नो भवत्वर्यमा।

परिवार और समाज के नवनिर्माण का मासिक

शान्तिधर्मी

मार्च, २०१३

वर्ष : १५ अंक : २ फाल्गुन २०६६
सृष्टि संवत्-१६६०८५३११३, दयानन्दाब्द : १८६

सम्पादक : चन्द्रभानु आर्य
(चलभाष ०८०५६६-६४३४०)

संयुक्त सम्पादक : सहदेव समर्पित
(चलभाष ०६४१६२-५३८२६)

उपसम्पादक : सत्यसुधा शास्त्री

प्रबंध संपादक : सुभाष श्योराण

आदरी सम्पादक : यज्ञदत्त आर्य

सह-सम्पादक : राजेशार्य आट्टा
डॉ० विवेक आर्य
नरेश सिहाग बोहल

सहयोग : आचार्य आनन्द पुरुषार्थी
श्रीपाल आर्य, बागपत
महेश सोनी, बीकानेर
भलेराम आर्य, सांघी
कर्मवीर आर्य, रेवाड़ी

विधि परामर्शक : जगरूपसिंह तंवर

कार्यालय व्यवस्थापक : रविन्द्रकुमार आर्य

कम्प्यूटर सज्जा : बिशम्बर तिवारी

मूल्य

एक प्रति	:	१०.०० रु.
वार्षिक	:	१००.०० रु.
आजीवन	:	१०००.०० रु.

कार्यालय :
७५६/३, आदर्श नगर, सुभाष चौक,
जीन्द–१२६१०२ (हरियाणा)
दूरभाष : ६४१६२–५३८२६
ई-मेल-shantidharmijind@gmail.com

प्रेरणा स्तम्भ

सभी उन्नतियों का केन्द्र स्थल है एक्य। जहाँ भाषा, भाव और भावना में एकता आ जाए वहाँ सागर में नदियों की भाँति सारे सुख एक-एक करके प्रवेश करने लग जाते हैं। –स्वामी दयानन्द

क्या? कहाँ?....

आलेख

महर्षि दयानन्द और हिन्दू समाज	६
मेरी कोलकाता यात्रा	१२
पुनर्जन्म समीक्षा	१५
क्या युवा वर्ग भटक रहा है	१६
स्वप्न क्यों आते हैं	२०
बहुरूपी संध्या (संध्या रहस्य)	२२
विश्व की प्रथम चिकित्सा पद्धति	२४
दहशत ही है दहशत का समाधान (अन्ततः)	३४

कहानी/प्रसंग

धर्म बलिदानी कुमारिल भट्ट-१७, व्यवहार की शिक्षा-२८, देश की चिन्ता-२८, आप भला तो जग भला-२८

कविताएँ- १४, १६, २७

स्तम्भ-आपकी सम्मतियाँ ५, अनुशीलन, सोम सरोवर ७ चाणक्य नीति, अमृतवचनावली ८, बाल वाटिका २६, भजनावली २६

साथ में : यज्ञवेदि रचने के लाभ, ऋषि दयानन्द का सत्य स्वरूप जग जान न पाया, मैं और मेरे पिता, नारी अबला नहीं सबला है

वेद-विचार

सामवेद आग्नेय पर्व

पद्यानुवाद : स्व० आचार्य विद्यानिधि शास्त्री

यद्वाहिष्ठं तदग्नये बृहदर्च विभावसो।
महिषीव त्वद्रयिस्त्वद्वाजा उदीरते।।८६।।

जो अतिशय सुखवाहक[1] धन है प्रभु को वह हम भेंट करें।
दीप्तकिरण हे देव पूज्यतम! आप उसे स्वीकार करें।।
तेरा ही धन तेरा ही बल अन्न तुम्हें हम सौंप रहे।
महिष समान तुम्हीं में सब धन बल अन्नों का वास रहे।।

पूर्ण सम्पादक मण्डल अवैतनिक है। पत्रिका में व्यक्त लेखकों के विचारों से सम्पादक मण्डल का सहमत होना अनिवार्य नहीं है। किसी भी प्रकार के विवाद का न्याय क्षेत्र जीन्द होगा।

शिक्षा पद्धति का आधार

❒चन्द्रभानु आर्य

शिक्षा मनुष्य-निर्माण की सतत् प्रक्रिया है- फ्रॉयड का मत है कि जब बच्चा अँगूठा चूस रहा होता है, तभी उस पर संस्कार पड़ रहे होते हैं, जो उसके भावी जीवन का निर्माण करते हैं। परन्तु हमारे मनीषियों की व्यवस्था इससे भी चार कदम आगे चलती है। जीवन-निर्माण के लिये सोलह संस्कारों की व्यवस्था में प्रसवपूर्व के संस्कार इसी निर्माण प्रक्रिया का हिस्सा हैं। माता-पिता और आचार्य ये मनुष्य के तीन शिक्षक हैं। उपनयन के समय आचार्य को शिक्षा के लिये सौंपने से पहले की शिक्षा के जिम्मेदार माता-पिता हैं। इसके अतिरिक्त उसके अपने पिछले जन्म के संस्कार हैं जो मनुष्य की दिशा का निर्धारण करते हैं। इनको नियंत्रित, व्यवस्थित रूप देना ही शिक्षा का कार्य है।

इस व्यवस्था का वैज्ञानिक स्वरूप हमारी संस्कृति के मनीषियों ने पहचाना है। उपनयन से पूर्व बालक माता से वर्णोच्चारण शिक्षा प्राप्त कर चुका है-सामान्य व्यवहार की प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त कर चुका है, उपनयन में वे उसे उस तपस्वी-विद्वान्-आचार्य माता की गोदी में सौंप देते हैं, जो उसे उसी प्रकार सुरक्षित, संरक्षित रखता है-जिस प्रकार माता अपने गर्भस्थ शिशु को।

आचार्य उपनयमानो ब्रह्मचारिणं कृणुते गर्भमन्तः।

यह गुरू शिष्य के पवित्र सम्बन्ध की सर्वश्रेष्ठ दृष्टि है और फिर आचार्य क्या है-''आचारं ग्राहयति'' जो आचरण सिखाता है। उपनयन संस्कार करते हुये वह कहता है-**मम व्रते ते हृदयं दधामि मम चित्तं अनुचित्तं ते अस्तु।** अर्थात् मैं तेरे हृदय को अपने हृदय में लेता हूँ। तेरे चित्त को अपने चित्त में लेता हूँ-गुरु और शिष्य का यह निकट सम्बन्ध ही आदर्श पर्यावरण है। **''अगादगात्संभवति हृदयादधिजायसे आत्मा वै पुत्र नामासि''** शिष्य के प्रति आचार्य का यह पुत्रभाव ही वैदिक शिक्षा पद्धति का मूल आधार है।

भौतिक पर्यावरण भी बालक के विकास का महत्वपूर्ण आधार है। **''उपह्वरे गिरीणां संगमे च नदीनां धिया विप्रो अजायत।''** पर्वतों की उपत्यकाओं और नदियों के संगम पर मनुष्य शिक्षित होकर विप्र बनता है।

इसी के साथ-साथ छात्र तपस्या का व्रत धारण करता है। आश्रम में गुरू से शिक्षा करने के लिये छात्र गया है। आश्रम शब्द ही श्रम का प्रतीक है। वैदिक परिभाषा में व्रत धारण करके किये गये परिश्रम को तपस्या कहते हैं। विद्यार्थी के लिये आराम-त्याज्य है। वह मखमल के गद्दों पर नहीं सोता। वह सर्दी-गर्मी, धूप, छाँव के प्रति संवेदनशील नहीं होता। यह तपस्या उसे जीवन की प्रत्येक चुनौती का सामना करने की शक्ति प्रदान करती है।

यह भी एक सवाल है कि उन्हें पढ़ाया क्या जाए। पाठन विषय के में भी वैदिक दृष्टि अधिक समीचीन और तार्किक है। केवल इतनी सी बात है-**'हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखं। तत्त्वं पूषन् अपावृणु सत्यधर्माय दृष्टये।''** संसार की चकाचौंध से सत्य पर्दे में है। उसी पर्दे को उठाकर देखने से वह सच्चाई सामने आती है, जिसकी हमें तलाश है। भौतिक ज्ञान के साथ-साथ आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करना भी अनिवार्य है। मुण्डक उपनिषद में आता है कि शौनक आचार्य अंगिरस के पास गया और कहा कि मैंने वेद-वेदांगों के अध्ययन द्वारा अपरा विद्या का ज्ञान प्राप्त कर लिया है। परा विद्या का ज्ञान नहीं हुआ। इसी प्रकार छान्दोग्य उपनिषद् के एक प्रकरण में नारद जी महर्षि सनत्कुमार के पास जाकर कहते हैं कि मैंने वेद-वेदांग-इतिहास व अनेक शास्त्रों का अध्ययन कर लिया है परन्तु मैं मंत्रवित् हूँ, ब्रह्मवित्त नहीं। उपर्युक्त प्रकरणों से यह स्पष्ट होता है कि वैदिक शिक्षा का उद्देश्य क्या है। वस्तुतः शिक्षा का उद्देश्य जीवन के उद्देश्य की पूर्ति है। जब तक शिक्षा का संगतिकरण जीवन के उद्देश्य के साथ नहीं होगा तब तक शिक्षा एकांगी है। भौतिक-विज्ञान व आध्यात्मिक विज्ञान-अपरा और परा विद्या, विद्या और अविद्या-जब तक दोनों का सामंजस्य नहीं होगा मानव निर्माण का यज्ञ सफल नहीं माना जा सकता।

इन्हीं मूल्यों को ध्यान में रखकर आचार्य दीक्षान्त समारोह में अपने शिष्यों को इस प्रकार का उपदेश करने का साहस कर सकता है-''**सत्यं वद। धर्मं चर, स्वाध्यायान्मा प्रमद। सत्यान्न प्रमदितव्यम्। धर्मान्न**

(शेष पृष्ठ २५ पर)

आपकी सम्मतियाँ

फरवरी अंक पढ़ा, धन्यवाद! मुखपृष्ठ पर आर्यों के आदि देश आर्यावर्त्त का चित्र अच्छा लगा। सम्पादकीय 'अपना इतिहास' जानकारी बढ़ाने वाला है। इसमें कोई शक नहीं कि जो इतिहास हमें पढ़ाया जा रहा है वह हमें अपने देश की ठीक-ठीक जानकारी नहीं देता। हमें तो इतिहास के केवल उस भाग को ही पढ़ाया जा रहा है जो असत्य, भ्रामक और हमें शरमिंदा करने वाला है। विदेशी इतिहासकारों ने भारतीय इतिहास में हमारे गुणों, संस्कारों, उपलब्धियों को बहुत कम करके आंका है। उन्होंने यह स्थापित करने में पूरा जोर लगा दिया कि आर्य ईरान से या और कहीं से भारत में आए; लेकिन स्वामी दयानन्द ने भारतीय ग्रथों के आधार पर संसार के सम्मुख प्रमाणित कर दिया कि आर्य मूल रूप से भारत के ही निवासी थे और यहाँ से ही वे संसार के अन्य भागों में गए थे। नरेन्द्र सोनी के विचार अच्छे लगे। शिक्षा प्रणाली ऐसी होनी चाहिए जो न केवल धन कमाने के बारे में बताए बल्कि अच्छे संस्कार भी दे। डॉ० रामभगत लांगायन की 'अमृतवचनावली' शिक्षाप्रद है। स्वामी विद्यानन्द सरस्वती का लेख 'आदि सृष्टि कहाँ?' विभिन्न प्रमाणों को ध्यान में रखकर साबित करता है कि हिमालय पर्वत पर ही आदि सृष्टि हुई थी। डॉ० विनोद गुप्ता का 'स्वास्थ्य चर्चा' उपयोगी है। बाल वाटिका की रचनाएँ मनोरंजक, ज्ञानवर्धक एवं शिक्षाप्रद हैं। भजनावली रोचक एवं प्रेरक है।

प्रो० शामलाल कौशल
मकान नं० ९७५ बी/ २०, ग्रीन रोड रोहतक-१२४००१

कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी।
सदियों रहा है दुशमन दौरे जहाँ हमारा।।

शांतिधर्मी के जनवरी अंक में आचार्य मुनीश का लेख 'आर्यों का आदि देश' व फरवरी अंक में इसी संबंध में विशेष शोधपूर्ण सामग्री पढ़ी। वास्तव में आर्य आर्यावर्त्त (भारतवर्ष) के ही मूल निवासी हैं, जिनका उद्‌गम स्थान स्वामी दयानन्द जी सरस्वती जी ने मनुस्मृति के आधार पर 'त्रिविष्टप्' अर्थात् तिब्बत को माना है। आर्य शब्द गुणवाचक है, जिसका अर्थ है श्रेष्ठ पुरुष और दस्यु शब्द भी गुणवाचक है जिसका अर्थ है- अनार्य अर्थात् दुष्ट पुरुष। संस्कृत आर्यों की मूल भाषा है, तथा संसार की सभी भाषाओं की जननी है। संसार की कोई भी भाषा ऐसी नहीं है जिसमें संस्कृत भाषा के शब्द न हों। जर्मन विद्वान् मैक्समूलर तथा लार्ड मैकाले के हजारों प्रयत्न भी यह वैज्ञानिक रूप से सिद्ध नहीं कर सके कि आर्य भारतवर्ष में बाहर से आए हैं। तिब्बत से ही आर्य संसार के दूसरे हिस्सों में हिन्दुकुश, सुलेमान की पहाड़ियों से होते हुए दजला और फरात घाटियों में गए। दूसरी शाखा 'पामीर की गांठ' से हवांग हो नदी घाटी तथा मंगोलिया में गई। आज भी यदि इन स्थानों से डी० एन० ए० टैस्ट करवाए जाएँ तो उनका उद्‌गम अवश्य ही तिब्बत से मिलेगा। शांतिधर्मी के माध्यम से आज की युवा पीढ़ी को कहना चाहूँगा कि वे विदेशी इतिहासकारों की अपेक्षा यदि ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका का अध्ययन करें तो वे पाएँगे कि संसार का प्राचीनतम ग्रंथ वेद ही है। हमें अपनी आर्य संस्कृति को बचाने के लिए अपनी सांस्कृतिक मान्यताएँ संजोकर रखनी होंगी। जिनमें सबसे पहले आर्य वेशभूषा, आहार, आचरण और व्यवहार अपनाना होगा ताकि हम सब भारतवासी गर्व से कह सकें कि आर्यावर्त्त ही आर्यों का मूल स्थान है।

डॉ० आर० एस० हुड्डा सांघी वाले
(विभागाध्यक्ष से०नि०, भूगोल, दयानन्द कालेज)
1414, अर्बन एस्टेट-२, हिसार-125005

शांतिधर्मी में पाए मैंने गुण अनन्त
सम्पादक मण्डल सहित देखो तुम अनन्त बसन्त।
शांतिधर्मी फैल जावे दिग् दिगन्त।।
प्रथम दृष्ट्या पाया मैंने ज्ञान का अगाध सागर।
रक्षा करें इसकी सदा सर्वदा प्यारे परमेश्वर।।

फणीन्द्र कुमार पाण्डेय
ग्राम सल्ला, सिमल्टा
पोस्ट फूंगर, चम्पावत-२६२५२३ (उत्तराखण्ड)

ईश्वर की अनुकम्पा आप पर सदा बनी रहे। शांतिधर्मी का अंक मिला, धन्यवाद! पढ़कर अतीव प्रसन्नता हुई। ज्ञान में वृद्धि हुई। इस अंक में-

नैतिक मर्यादा भरे बहता शांतिप्रवाह।
तार तार कलि-काल में पूरा विश्व गवाह।।
पूरा विश्व गवाह 'शांतिधर्मी' भी कहती।
आर्य संस्कृति सरसती दुर्गति कभी न होती।।
नित्य करें प्रार्थना 'वचन अमृत' हों वैदिक।
गुड़ खाकर हों स्वस्थ रहेंगे तब ही नैतिक।।

डॉ० सुरेश प्रकाश शुक्ल सम्पादक 'प्राची प्रतिभा'
554/ 93 पवनपुरी लेन 9, आलम बाग लखनऊ ०५

यज्ञवेदि रचने का लाभ

(स्वामी वेदरक्षानन्द सरस्वती, संरक्षक–आर्ष गुरुकुल कालवा)

प्रश्न– क्या यज्ञ करने के लिये पृथिवी खोदके वेदिरचन, प्रणीता, प्रोक्षणी और चमसादि पात्रों का स्थापन, दर्भ का रखना, यज्ञशाला का बनाना और ऋत्विजों का करना, यह सब करना ही चाहिये?

उत्तर– करना तो चाहिये, परन्तु जो जो युक्ति सिद्ध हैं, सो सो ही करने के योग्य हैं। क्योंकि जैसे वेदि बनाके उसमें होम करने से वह द्रव्य शीघ्र भिन्न भिन्न परमाणु रूप होके, वायु और अग्नि के साथ आकाश में फैल जाता है, ऐसे ही वेदि में अग्नि तेज होने और होम का साकल्य इधर उधर बिखरने से रोकने के लिये वेदि अवश्य रचनी चाहिये। और वेदि के त्रिकोण, चतुष्कोण, गोल तथा श्यैन पक्षी आदि के तुल्य बनाने के दृष्टान्त से रेखागणित विद्या भी जानी जाती है कि जिससे त्रिभुज आदि रेखाओं का भी मनुष्यों को यथावत् बोध हो। तथा उसमें जो ईंटों की संख्या की है, उससे गणित विद्या भी समझी जाती है। इस प्रकार से कि जब इतनी लम्बी, चौड़ी और गहरी वेदि हो तो उसमें इतनी बड़ी ईंटें इतनी लगेंगी, इत्यादि वेदि के बनाने में बहुत प्रयोजन है। तथा सुवर्ण, चान्दी वा काष्ठ के पात्र इस कारण से बनाते हैं कि उनमें जो घृतादि पदार्थ रखे जाते हैं वे बिगड़ते नहीं। और कुश इसलिये रखते हैं कि जिससे यज्ञशाला का मार्जन हो और चिंवटी आदि कोई जन्तु वेदि की ओर अग्नि में न गिरने पावें।

ऐसे ही यज्ञशाला बनाने का यह प्रयोजन है कि जिससे अग्नि की ज्वाला में वायु अत्यन्त न लगे, और वेदि में कोई पक्षी किंवा उनकी बीठ भी न गिरे। इसी प्रकार ऋत्विजों के बिना यज्ञ का काम कभी नहीं हो सकता, इत्यादि प्रयोजन के लिये यह सब विधान यज्ञ में अवश्य करना चाहिये। इनसे भिन्न द्रव्य की शुद्धि और संस्कार आदि भी अवश्य करने चाहियें। परन्तु इस प्रकार से प्रणीता पात्र रखने से पुण्य और इस प्रकार रखने से पाप होता है, इत्यादि कल्पना मिथ्या ही है। किन्तु जिस प्रकार करने में यज्ञ का कार्य अच्छा बने, वही करना अवश्य है, अन्य नहीं।

(ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका, वेदविषयविचारः, महर्षि दयानन्द)

क्या आज की नारी अबला है।

नरसिंह सोनी,
डागा सेठिया गली, बीकानेर राजस्थान

आज की नारी ने यह सिद्ध कर दिया है कि वह किसी भी क्षेत्र में पुरुष से पीछे नहीं है। शिक्षक, डॉक्टर, वैज्ञानिक, वायुयान, रेल, बस, पुलिस, सेना, कलैक्टर, राज्यपाल, मंत्री, मुख्यमंत्री, प्रधानमंत्री, राष्ट्रपति आदि सभी क्षेत्रों में वह भागीदार रही है और सम्मान पाया है। लेकिन दिल्ली गैंगरेप जैसी घटनाएँ नारी की सारी विशेषताओं को धूमिल करने का दुःसाहस ही कही जा सकती हैं। यह दुर्भाग्य की बात है कि नारी को केवल भोग्या की दृष्टि से देखा जाता है और उसके साथ पशुओं से भी बदतर व्यवहार किया जाता है। यह नारी को अबला और असहाय समझने का दुष्परिणाम है। लेकिन नारी बास्तव में सबला है। हमारी देवियों में नारी का एक रूप दुर्गा और कालका भी है, जिन्होंने दुष्टों का संहार किया। आज फिर समय आ गया है दुर्गा और कालका बनने का। यानि जुडो कराटे, कटार, पिस्टल आदि अपनी सुरक्षा के लिए सीखना और सिखाना होगा। केवल दूसरों या सरकार के भरोसे सुरक्षा नहीं हो सकती। इतिहास गवाह है कि पहले मुगल काल में और अंग्रेजों के शासन काल में नारियों ने आततायियों के छक्के छुड़ाकर अपने सतीत्त्व की रक्षा की थी। रानी लक्ष्मी बाई, पद्मावती, कर्णदेवी आदि कई नारियों ने अपने सम्मान के लिए अपने बल से शत्रुओं में आतंक फैला दिया था। सरकार को चाहिए कि सभी स्कूलों और कालेजों में बालिकाओं की सुरक्षा के लिए जूड़ो कराटे आदि अनिवार्य रूप से सिखाए जाएँ और अपराधियों को तत्काल कठोर से कठोर सजा दी जाए। कठोर और तत्काल सजा न देना अपराध को बढ़ावा देना है। इसी कमी से आज अपराध बढ़ रहे हैं। अपराधियों को सजा का कोई भय नहीं है। क्या सरकार इस सत्य सुझाव पर अमल करेगी?

धर्म मेघ की रस-वर्षा

❑पं० चमूपति जी

पवस्येन्दो वृषासुतः कृधी नो यशसो जने। विश्वा अप द्विषो जहि।।३।।

ऋषि :-अमहीयुः = पृथिवी की नहीं, द्युलोक की उड़ान लेने वाला

(इन्दो) हृदय को सरसाने वाले संजीवन रस! (वृषा-सुतः) तू धर्ममेघ द्वारा सम्पादित हुआ है। (पवस्व) तू पवित्रता का प्रवाह चला। (नः) हमें (जने) जनता में (यशसः) यशःस्वरूप (कृधी) कर।

द्वेष को मिटाने निकला है तो सबसे पूर्व अपने हृदय को द्वेषरहित कर।

समय-समय पर धर्म मेघ संसार में आते हैं। वे आत्म संशोधन की एक नई लहर चलाते हैं। उनके प्रचार के परिणामस्वरूप, पवित्रता का एक नया प्रवाह संसार में बह निकलता है। जो भी इस प्रवाह के साथ संबद्ध हो जाता है वह अपने सम्पूर्ण जीवन में एक नए रस का संचार अनुभव करता है। धर्म मेघ के निकट जाना मानो अपने हृदय को आध्यात्मिक विद्युत् द्वारा आविष्ट कर लेना है। नये आन्दोलन का विरोध होता है। सुधारणा का पक्ष लेने वाले कष्ट झेलते हैं, आपत्तियाँ सहते हैं और इस सहन में उन्हें आनन्द आता है। एक विचित्र प्रकार के मिठास की अनुभूति होती है।

सुधारक दल अपने सहन से, सदाचार से लोकप्रिय होता जाता है। जनता आरम्भ में उनके कथन को स्वीकार नहीं करती परन्तु उनकी तपस्या का सिक्का मानती है। उनका यश दिग् दिगन्त में फैल जाता है।

सुधारकों के हृदय में द्वेष का लेश-मात्र नहीं रहता। उनकी आपस की प्रीति के तो कहने ही क्या? जहाँ कोई सुधारक भाई मिल गया वहाँ उस पर वारे न्यारे हो गए। किसी सहोदर भ्राता से मिलने का इतना आनन्द नहीं होता, जितना उस धर्म के भाई से!

सर्व साधारण के प्रति भी उनकी वृत्ति प्यार तथा उपकार की होती है। वे किसी से शत्रुता कर ही नहीं सकते। धार्मिक सुधार तो नाम ही विश्व व्यापी प्यार का है। वे जनता का सुधार ही इसीलिए करना चाहते हैं कि उनको जनता से प्यार है।

सुधारक सौभाग्यवान् है। उसे उस सत्य की झांकी मिली है जो सर्वसाधारण के हिस्से नहीं आया। यदि सर्वसाधारण उनका विरोध करते हैं तो सिर्फ इसलिए कि उन्हें वह प्रकाश नहीं मिला। वे अंधेरे में हैं। कोई अंधेरे में जा रहे-- वे रुष्ट क्यों हों? नेत्रविहीन रास्ते से भटक रहा है तो आंखों वाले का काम है कि उसे रास्ते पर डाल दे। समझा कर, बुझा कर, रिझाकर, मनाकर- किसी तरह उसे सन्मार्ग पर ले जाये।

द्वेष को मिटाने निकला है तो सबसे पूर्व अपने हृदय को द्वेषरहित कर। द्वेषी के प्रति भी द्वेष भावना पैदा न होने दे। तू द्वेषी हो गया तो विजय द्वेष की हुई, तेरी धार्मिक सुधारणा की नहीं। उद्धार करता करता अपने आप पतित न हो जा।

प्रभो! हमने प्रचार का बीड़ा उठाया है। क्या यह बीड़ा आप का नहीं! धर्म मेघ भी तो आपकी विभूति है। जिस संजीवन रस का संचार उसकी वाग्वृष्टि से हो रहा है, वह रस आपकी कृपा कोरों का ही है। तो उससे द्वेष क्यों किया जाता है? अपने भक्त के भक्ति रस को जरा और मीठा कर दो, जिससे रही सही कटुता भी नष्ट हो जाए। मानव समाज में मित्रता का राज्य हो। मनुष्य आपस में भाई-भाई हो जाएँ। सब एक दूसरे का यशोगान करें। सब यशः स्वरूप हों। निन्दा, चुगली, ईर्ष्या- ये सब द्वेष के विभिन्न रूप हैं। तुम्हारे प्रेम के संचार से हृदय शुद्ध हो जाते हैं।

प्रभो! हमारे हृदय को शुद्ध करो! हम यशोगान के सतत् बहने वाले स्रोत बन जाएँ। मुदितादि मैत्री, प्रेरणा, प्रोत्साहन-इन सद्गुणों से हमारे आचार, विहार, व्यवहार सब को आभूषित कर दो। सामाजिक जीवन की संजीवनी यशोगान है। हम एक दूसरे का यश ले उड़ें। दूसरे की बड़ाई हमें अपनी बड़ाई प्रतीत हो। हम यशोगान की मूर्त्तियाँ बन जायें।

चाणक्य-नीति

तृतीयोऽध्यायः (गतांक से आगे)

एकेनाऽपि सुवृक्षेण पुष्पितेन सुगन्धिना।
वासितं तद्वनं सर्वं सुपुत्रेण कुलं यथा।।१४।।

जैसे एक ही सुगन्धित पुष्पों वाले वृक्ष से सारा वन सुगन्धित हो जाता है वैसे ही एक सुपुत्र से सारा कुल प्रतिष्ठा=यश प्राप्त करता है।

एकेन शुष्कवृक्षेण दह्यमानेन वह्निना।
दह्यते तद्वनं सर्वं कुपुत्रेण कुलं यथा।।१५।।

जैसे एक ही सुखा वृक्ष-जिसमें आग लग गई हो, वह सारे वन के जलने का कारण बन जाता है, उसी प्रकार एक नालायक पुत्र, जो व्यसनों की अग्नि में जल रहा है, पूरे कुल के विनाश का कारण बन जाता है।

एकेनाऽपि सुपुत्रेण विद्यायुक्तेन साधुना।
आह्लादितं कुलं सर्वं यथा चन्द्रेण शर्वरी।।१६।।

एक ही विद्यायुक्त और सज्जन पुत्र होने से कुल की प्रतिष्ठा हो जाती है और सारा कुल आनन्दित हो जाता है। जैसे चमकते हुए चांद से रात्रि देदीप्यमान हो जाती है।

किं जातैर्बहुभिः पुत्रैः शोक सन्तापकारकैः।
परमेकः कुलाऽऽलम्बी यत्र विश्राभ्यते कुलम्।।१७।।

जो पुत्र शोक और सन्ताप देते हैं, ऐसे पुत्र अनेक भी उत्पन्न हो जाएँ तो भी उनका कोई लाभ नहीं है। ऐसा एक ही पुत्र काफी है जो कुल की मर्यादाओं का पालन करता है, वह पूरे कुल का आश्रय होता है।

लालयेत् पंचवर्षाणि दशवर्षाणि ताड़येत्।
प्राप्ते तु षोडशो वर्षे पुत्रं मित्रवदाचरेत्।।१८।।

अपनी सन्तान के साथ कैसा व्यवहार करे? पांच वर्ष की अवस्था तक अत्यन्त प्रेम से लालन करे, पांच वर्ष के पश्चात् १० वर्ष तक सन्तान का ताड़न करे। १६ वर्ष की आयु के पश्चात् सन्तान के साथ मित्रवत् व्यवहार करे।

उपसर्गेऽन्यचक्रे च दुर्भिक्षे च भयावहे।
असाधुजनसम्पर्के यः पालयेत् स जीवति।।१९।।

विनाश की स्थितियाँ होने पर, अकाल पड़ने पर, भयानक स्थितियों में तथा दुष्टों के सम्पर्क से जो लोगों की रक्षा करता है, उसी का जीवन धन्य है।

धर्मार्थकाममोक्षाणां यस्यैकोऽपि न विद्यते।
जन्म-जन्मनि मर्त्येषु मरणम् तस्य केवलम्।।२०।।

मनुष्य जीवन के चार लक्ष्य हैं- धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। जो इनमें से एक को भी प्राप्त नहीं करता, उसका जीवन व्यर्थ है।

अमृत वचनावली

प्रीतिशतकम्

❐डॉ० रामभक्त लांगायन आई ए एस (सेवानिवृत्त)

सूर्ये सूर्यातपे साम्यं तथा सृष्टौ च स्रष्टरि।
सृष्टिरूपेण दृश्योऽयमीश्वरः सर्वव्यापकः।।४२

जिस प्रकार सूरज और धूप में कोई अन्तर नहीं है, इसी प्रकार स्रष्टा और सृष्टि में कोई भेद नहीं है। एक प्रकट है, दूसरा गुप्त है। परमात्मा कण कण में व्यापक है।

अन्येनापकृतं यत्तु कदाचिदपि न स्मरेत्।
जीवनोत्कर्षसिद्ध्यर्थं हितमन्यस्य यत्कृतम्।।४३।।

जीवन के उत्कर्ष के लिए दो चीजें जरूरी हैं- भलाई जो तुम किसी के साथ करो और बुराई जो कोई तुम्हारे साथ करे- उन्हें भूल जाओ, कभी याद न रखो।

यथा विकसितं पुष्पमुपयान्त्येव षट्पदाः।
जनाः स्वतः स्पृहन्त्येव गुणवन्तं जनं तथा।।४४।।

जिस प्रकार फूल खिलने पर मधुमक्खियाँ स्वयं उसके पास आ जाती हैं, उसी प्रकार गुणवान् व्यक्ति की तरफ लोग स्वतः आकर्षित हो जाते हैं।

निर्मलं हृदयं यस्य मधुरा सूनृता च वाक्।
विनम्रव्यवहारश्च स जनः पुरुषोत्तमः।।४५।।

जिसका मन साफ है, सच्ची और मीठी वाणी है दूसरों के साथ अच्छा विनम्र व्यवहार करता है, वही श्रेष्ठ पुरुष है।

न किञ्चिच्छ्रद्धया तुल्यं सर्वं श्रद्धामयं जगत्।
यो जनः श्रद्धयाहीनः महानिर्धन एव सः।।४६

श्रद्धा इस जगत् में सबसे मूल्यवान् वस्तु है। जिसके पास श्रद्धा है, वह धनी है, जिसके पास श्रद्धा नहीं है, उससे महानिर्धन कोई दूसरा नहीं है।

नृत्यं सुनृत्यतां याति यथा संगीत तालतः।
तथा जीवनसौन्दर्यं कृपया वर्धते प्रभोः।।४७।।

जैसे संगीत की ताल से नर्तक का नृत्य और भी सुन्दर होता चला जाता है, उसी प्रकार जब मनुष्य पर प्रभु की कृपा हो जाती है तब उसका जीवन और भी उत्कृष्ट और सुन्दर हो जाता है।

++++

महर्षि दयानन्द और हिन्दू समाज

☐राजेशार्य आट्टा, ११६६, कच्चा किला, साढौरा, यमुनानगर-१३३२०४

महर्षि दयानन्द अपने जीवन की भेंट चढ़ाकर भी इस हिन्दू समाज का उद्धार करना चाहते थे। यद्यपि कभी-कभी महर्षि ने इसके लिए कठोरता भी बरती है, जो सर्वथा उचित भी थी।

प्रिय पाठकवृन्द! विश्व के सभी निष्पक्ष विद्वान् इस बात को एकमत से स्वीकारते हैं कि संसार का प्राचीनतम धर्म वैदिक धर्म ही है। आर्यों के भारतवर्ष से बाहर जाकर बसने से वहाँ की जलवायु, सुविधा, आलस्य व प्रमाद के कारण विकृत होकर वैदिक धर्म ही यहूदी, पारसी आदि में परिवर्तित हो गया। फिर उन्हीं की शाखाएँ ईसाई व इस्लाम कहलाईं। इधर भारतवर्ष में भी वैदिक धर्म में विकृतियाँ आईं, जिसके परिणामस्वरूप जैन व बौद्ध मतों का जन्म हुआ। यद्यपि इनका उद्देश्य वैदिक धर्म को परिष्कृत करना था परन्तु ये स्वयं ही अलग मत बन गये जिसके कारण वैदिक धर्म अपने विकृत रूप में ही पौराणिकता की ओर चल पड़ा और इस्लाम के आगमन पर पौराणिक धर्म ही हिन्दू धर्म कहलाया।

मुझे समझ नहीं आता कि इसे हिन्दू समाज की संकीर्णता कहूँ या विशालता कि जो भी महापुरुष इसका सुधार करने आया, उसे जीते जी तो अपमानित किया और अलग मत का संस्थापक बनने पर उसे अवतार मानकर पूजने लगे। महावीर, बुद्ध, नानक, कबीर आदि सभी इसी कड़ी में आते हैं। परन्तु विडम्बना की बात यह है कि अपना कोई नया मत उपस्थित न करके प्राचीन वैदिक धर्म को ज्यों का त्यों (ब्रह्मा से जैमिनी मुनि पर्यन्त की मान्यता) प्रस्तुत करने वाले स्वयं को हिन्दू (वैदिक) धर्म का अभिन्न अंग मानने वाले समाज सुधारक महर्षि दयानन्द को यह हिन्दू समाज पूरे जीवन ईंट पत्थर मारता रहा, विष पिलाता रहा और अपना भयंकर शत्रु मानता रहा। यहाँ तक कि उसकी सभी मान्यताओं (स्त्रीशिक्षा का समर्थन, बाल विवाह, अनमेल विवाह, सती व बलि प्रथा का विरोध) को मानकर भी उसे अपना हितैषी मानने के लिए तैयार नहीं है।

महर्षि दयानन्द अपने जीवन की भेंट चढ़ाकर भी इस हिन्दू समाज का उद्धार करना चाहते थे। यद्यपि कभी-कभी महर्षि ने इसके लिए कठोरता भी बरती है, जो सर्वथा उचित भी थी। उदयपुर में विष्णुलाल पंड्या की शंका का समाधान करते हुए महर्षि ने कहा -"भारतवासी ऐसी गहरी निद्रा में निमग्न हैं कि मीठे शब्दों से तो वे आँखें खोल कर देखने को भी तैयार नहीं होते। सुधार का तो ये नाम तक लेने को तैयार नहीं। यदि ये कुरीतियों के खंडन रूपी कोड़े से जाग जाएं तो ईश्वर को कोटि-कोटि धन्यवाद दूँगा। ---इसके पिछले प्रमाद के परिणामस्वरूप करोड़ों लोग मुसलमान हो गए। अब प्रतिदिन सैंकड़ों ईसाई बनते जा रहे हैं। ऐसे समय स्वधर्म बन्धुओं को कठोर हाथों से उनकी शिखायें पकड़ कर जगाना होगा। मैं इस कटु कर्तव्य का पालन अपने स्वार्थ के लिए नहीं कर रहा। मुझे तो इसके कारण अवहेलना, निन्दा, कुवचन, ईंट-पत्थर और विष भी स्थान-स्थान पर मिलता है, किन्तु मैं धर्म और जाति के उत्थान के लिए यह सब कुछ सह रहा हूँ।"

महर्षि के जीवनकाल में ही अंग्रेजों का आश्रय लेकर बहुत से लोगों ने समाज सुधार के नाम से अनेक संस्थाएँ खड़ीं कीं, परन्तु वे प्रायः ईसाइयत या आधुनिकता

से प्रभावित थी, अतः हिन्दू समाज से कट गई। परन्तु महर्षि ने लखनऊ में अपना मन्तव्य स्पष्ट करते हुए पंडित रामाधार को बताया कि वह ब्राह्म समाज के समान स्वयं को हिन्दू (आर्य) धर्म से पृथक् नहीं करना चाहते, अपितु उनका उद्देश्य इस समाज में रहकर ही इसे सुधारना है।

सूरत (गुजरात) में श्री नर्मदा शंकर के घर प्रवचन करते समय कुछ उपद्रवियों ने पथराव कर दिया तो भक्तों द्वारा प्रवचन स्थगित करने का अनुरोध करने पर महर्षि बोले- "अपने भाइयों द्वारा फैंके जा रहे ये पाषाण भी मेरे लिये पुष्प समान हैं। मैं अपना प्रवचन तो समय पर ही समाप्त करूँगा।"

भडौंच में माधवराव त्र्यम्बक शास्त्रार्थ में पराजित होकर गाली गलौच पर उतर आया। यह सुन सेवक बलदेव ने रौद्र रूप का प्रदर्शन किया तो महर्षि उसे शान्त करते हुए बोले-"बलदेव! किन पर कोप कर रहे हो तुम? ये अपने ही भाई तो हैं। इन्हीं की कल्याण कामना में तो मैं अहर्निश लगा हूँ।"

अमृतसर में शास्त्रार्थ के लिए आई पंडितों की टोली ने ईंट-पत्थरों की बौछार कर दी। स्वामीजी को भी एक पत्थर लगा और रक्त की धारा प्रवाहित हो उठी। भक्त जन उत्तेजित हो गए तो महर्षि ने उन्हें शान्त करते हुए कहा-"परोपकार और परहित करते समय निन्दा और अपमान उसी भांति सहना पड़ता है, जिस भांति उपवन के पौधों में खाद डालते समय राख और मिट्टी माली के सिर पर भी पड़ जाया करती है। मुझ पर चाहे कितनी धूल और राख पड़े, मुझे उसकी कोई चिन्ता नहीं, परन्तु आर्यसमाज रूपी यह वाटिका हरी-भरी रहनी चाहिए।"

महर्षि दयानन्द प्राचीन वैदिक धर्म के विकृत स्वरूप व नाम तक को भी शुद्ध रूप में प्रस्तुत करना चाहते थे। इसीलिए उन्होंने हिन्दू के स्थान पर आर्य नाम को स्वीकारा। सभी पौराणिक इस बात को मानते हैं कि हमारा प्राचीन व शुद्ध नाम आर्य है; हिन्दू शब्द के उनके लिए चाहे कोई भी अर्थ हों, परन्तु जब आर्य शब्द में कोई दोष नहीं है, तो मानने में आपत्ति क्यों है? और यह भी सत्य है कि हिन्दू शब्द का प्रयोग हमारे किसी भी प्राचीन ग्रन्थ; यहाँ तक कि पुराणों में भी नहीं मिलता तो इस नाम से इतना मोह क्यों हुआ? पूना के ८वें प्रवचन में महर्षि की टीस को अनुभव किया जा सकता है- "भाई श्रोतागण! हिन्दू शब्द का अर्थ

महर्षि दयानन्द का वास्तविक सत्य स्वरूप जग समझ नहीं पाया।

किसी विद्वान् का यथार्थ कथन है कि "महापुरुष होने का अर्थ है, गलत समझा जाना।" महापुरूषों को संसार प्रायः गलत ही समझता चला आया है। उनके जीवनकाल में तो प्रायः लोग उन्हें ठीक से समझ ही नहीं पाते। महामानव दयानन्द इसके अपवाद नहीं थे। संसार ने उन्हें समझने में भी प्रायः भूल की है। कोई उन्हें केवल एक समाज-सुधारक ही समझता रहा है तो कोई कोरा एक धर्मप्रचारक। कोई केवल एक कुरीति निवारक समझता रहा है, तो कोई मात्र एक पाखण्ड निवारक। यहाँ तक कि कोई उन्हें नास्तिक समझता रहा है तो कोई अंग्रेजों का एजेंट। जबकि स्वयं अंग्रेज उन्हें सदैव शंका की दृष्टि से देखते रहे हैं और बागी फकीर मानते रहे हैं। मतवादी लोग (विशेषतया ईसाई और मुसलमान) उन्हें अपना प्रबल शत्रु समझते रहे हैं। पर खेद है कि महर्षि दयानन्द का वास्तविक सत्य स्वरूप जग समझ नहीं पाया। सत्य तो यह है कि क्षुद्र दृष्टि वाले भला महर्षि का समग्र स्वरूप देख ही कैसे सकते थे? वस्तुतः महर्षि का यथार्थ एवं समग्र स्वरूप अभी जन-सामान्य के सम्मुख रखा जाना शेष है। आचार्य नरदेव शास्त्री ठीक ही लिखते हैं कि संसार चकित है कि उसने स्वामी दयानन्द को समझने में इतनी भूल क्यों की? उस समय संसार यदि स्वामी दयानन्द को न समझ सका, तो इतने आश्चर्य की बात नहीं है। सबसे बड़ा आश्चर्य यह है कि स्वामी दयानन्द के अनुयायी भी अब तक स्वामी जी के पूर्ण स्वरूप को नहीं समझ सके हैं।' (दयानन्द कोमेमोरेशन वाल्यूम, पृष्ठ ३८६)

यद्यपि आचार्य नरदेव शास्त्री ने ये शब्द आधी शती से अधिक पूर्व ऋषि निर्वाण अर्द्ध-शताब्दी के अवसर पर लिखे थे, पर लगता है कि ये शब्द आज के लिये लिखे गये हैं। यह सत्य है कि अधिकांश आर्य-गण भी आज तक महर्षि को ठीक से समझ नहीं पाये। सत्य तो यह है कि क्षुद्र-दृष्टि वाले हम लोग भला महर्षि का समग्र स्वरूप देख भी कैसे पाते। महर्षि के समग्र स्वरूप को न देख पाने के कारण हम कभी उनकी उपमा किसी एक से देने लगते हैं तो कभी किसी दूसरे से। पर वास्तविकता यह है कि महर्षि दयानन्द अपनी उपमा आप ही थे। हमें तो योगिराज अरविन्द के ये शब्द सारयुक्त प्रतीत होते हैं कि वह- "Unique is his type as he is unique in his work."

श्री यशपाल आर्यबन्धु

तो काला, काफिर, चोर इत्यादि है---- क्यों तुम अपना मूल का नाम भूल गए? हा! हम लोगों की यह स्थिति देखकर किसके हृदय को क्लेश न होगा? अस्तु, सज्जन जन! आज से 'हिन्दू' नाम का त्याग करो और आर्य तथा आर्यावर्त इन नामों का अभिमान धरो। गुण भ्रष्ट हम लोग हुए तो हुए, परन्तु नामभ्रष्ट तो हमें न होना चाहिए। ऐसी आप सबों से मेरी प्रार्थना है।"

विचारों का मतभेद होते हुए भी महर्षि का इस समाज से मनभेद नहीं था। वे चाहते थे कि यह हिन्दू समाज अपनी कमजोरियों को छोड़कर ईसाई व इस्लाम के मुकाबले में खड़ा हो सके। रावलपिंडी में सेठ जानसन की कोठी पर प्रवचन करने के बाद महर्षि ने कहा कि हिन्दुओं की दशा पर अत्यन्त खेद है, वह अन्य मतों की पुस्तक नहीं देखते और मेलों में जब कभी कोई पादरी और मौलवी उनको कहता है कि ब्रह्मा जी ने अपनी पुत्री से व्यभिचार किया तो झट स्वीकार कर लेते हैं। ब्रह्मा जी की बात तो किसी विश्वसनीय ग्रन्थ में नहीं है, परन्तु बाइबिल में लूत पैगम्बर का अपनी बेटियों से व्यभिचार करने का वर्णन है। वह यदि बतलावें तो पादरी तथा मुसलमान कदापि सामने आकर बात न कर सकें।'

एक दिन महर्षि मेरठ में कुछ त्रिपुंड्र तिलकधारी ब्राह्मणों सहित बैठे थे। एक भद्रजन ने आकर नमस्ते की और कुशलक्षेम पूछा तो महर्षि अत्यन्त व्यथित होकर बोले- भाई, कुशल कहाँ है? इससे बड़ा क्लेश और क्या होगा कि यह ब्राह्मण मण्डली आज कर्त्तव्य कर्म से कोसों दूर है। बाह्य आडम्बर और पाखण्ड इन्हें भा रहे है और धर्म प्रचार का तनिक भी ध्यान नहीं। आर्य सन्तान की दीन हीन दशा पर भी यह समाज पूर्णत: निश्चेष्ट है। इतना कहते-कहते महर्षि के नेत्रों से अश्रु कण छलक उठे।

एक रात महर्षि अर्ध रात्रि में जाग उठे और टहलने लगे। कर्मचारी जगा तो वेदना का कारण पूछने लगा। महर्षि ने लम्बा श्वास लेकर कहा - 'भाई! यह वेदना ओषधोपचार से दूर होने वाली नहीं है। यह तो भारतीयों की दुर्दशा के सम्बन्ध में चिन्ता से चित्त में उभरती है। ईसाई लोग कोल, भील आदि भारतवासियों को ईसाई मत में दीक्षित करने हेतु ताने-बाने बुनने में लगे हैं। रुपया पानी की तरह बहाने को तैयार हैं, किन्तु आर्य जाति के पुरोहित कुम्भकर्णी निद्रा में निमग्न हैं। उनके कानों पर जूं तक नहीं रेंगती। मेरी अब यही इच्छा है कि राजा महाराजाओं को सन्मार्ग पर लाकर उनका सुधार करूँ। आर्य जाति को एक उद्देश्य रूपी दृढ़ सूत्र में आबद्ध करने की मेरी प्रबल इच्छा है।'

हिन्दू समाज पर होने वाले प्रत्येक प्रहार का ऋषि ने ढाल बनकर सामना किया, बाद में उनका आर्यसमाज भी इस कार्य को अब तक करता रहा है। एच० परिकिंस साहब कमिश्नर अमृतसर ने एक बार महर्षि से कहा कि हिन्दूधर्म सूत के धागों के समान कच्चा क्यों है? तो महर्षि ने कहा-यह धर्म सूत के धागे के समान कच्चा नहीं है अपितु लोहे से भी अधिक पक्का है। लोहा टूट जाये तो टूट जाये पर यह कभी टूटने में नहीं आता। हिन्दूधर्म समुद्र के गुण रखता है। जिस प्रकार समुद्र में असंख्य लहरें उठती हैं उसी प्रकार इस धर्म में भी देखिये-ऐसे लोगों का भी मत है जो छान-छान कर पानी पीते हैं। एक मत ऐसे लोगों का भी है जो वाममार्गी कहलाते हैं। वे जो कुछ पाते हैं उसको पवित्र-अपवित्र और योग्य-अयोग्य का विचार किये बिना खा जाते हैं। एक मत ऐसे लोगों का भी है जो जीवन भर यति रहते हैं अर्थात् न तो किसी स्त्री से विवाह करते हैं और न ही किसी पर कुदृष्टि रखते हैं। एक मत ऐसे लोगों का भी है जो पराई स्त्री से मुंह काला करते हैं। एक मत ऐसे लोगों का भी है जो केवल निराकार परमात्मा को पूजते हैं और उसी का ध्यान करते हैं। फिर एक मत ऐसे लोगों का भी है जो केवल ज्ञानी हैं। एक मत ऐसा है जो केवल ध्यानी हैं। इसी धर्म मे वे लोग भी हैं जो छुआछूत का ऐसा विचार करते हैं कि अन्य मत के लोग तो एक ओर, शूद्रों के हाथ से पानी तक नहीं पीते, न खाना खाते हैं। एक मत उन लोगों का भी है जो शूद्रों के हाथ का पानी पीते हैं और इनसे भोजन बनवाकर खाते हैं। इतना होने पर भी यह सबके सब हिन्दू कहलाते हैं और वास्तव में हैं भी हिन्दू ही। कोई उनको हिन्दू धर्म से निकाल नहीं सकता। इसलिए समझना चाहिए कि यह धर्म अत्यन्त पक्का है, कच्चा नहीं। हम केवल यह चाहते हैं कि सब लोग पवित्र वेद की आज्ञा का पालन करें और केवल निराकार, अद्वितीय परमेश्वर की पूजा और उपासना करें। शुभ गुणों को ग्रहण करें और अशुभों को त्याग दें।

हिन्दू धर्म के प्रति सहानुभूति रखते हुए भी महर्षि ने उसके किसी भी मिथ्या सिद्धान्त के साथ समझौता नहीं किया। सत्यार्थप्रकाश का ग्यारहवाँ समुल्लास, कुछ अंश में अन्य समुल्लास भी तथा पंडितों के साथ किये सैंकडों शास्त्रार्थ इस बात का समर्थन करते हैं। फर्रुखाबाद में ईसाई पादरी जे० जे० लूकस ने एक बार महर्षि से प्रश्न किया कि यदि आपको तोप के मुंह से बांध कर कहा जाए कि यदि आप मूर्ति के समक्ष नतमस्तक न होंगे तो आपको तोप से उड़ा दिया जाएगा तो आपका उत्तर क्या होगा? महर्षि ने निर्भीकता से कहा कि उस समय मेरे मुंह से यही निकलेगा

(शेष पृष्ठ ३३ पर)

मेरी कोलकाता यात्रा एवं उससे संबंधित स्मृतियाँ

डॉ० विवेक आर्य, शिशु-रोग विशेषज्ञ, drvivekarya@yahoo.com

अनुसन्धान एक या दो व्यक्ति अथवा एक या दो दशक भर का कार्य नहीं हैं अपितु सैकड़ों वर्ष और हजारों व्यक्तियों के परिश्रम का विषय है।

जनवरी माह में मुझे जीवन में पहली बार कोलकाता जाने का अवसर प्राप्त हुआ। आर्यसमाज की पत्र पत्रिकाओं में श्री उमाकांत उपाध्याय जी का नाम सुना था। निश्चय किया कि कोलकाता में उनके दर्शन अवश्य करूँगा। जाने से पहले उनसे दूरभाष पर वार्तालाप हुआ तो उन्होंने कहा कि आप वही डॉ0 विवेक आर्य हैं जिनके लेख आर्यसमाज के पत्र पत्रिकाओं में छपते हैं। मेरे हाँ कहने पर उन्होंने कहा कि मैं 85 वर्ष का वृद्ध व्यक्ति जो चल फिर नहीं सकता और बिस्तर पर ही जीवन व्यतीत कर रहा हूँ आपको आशीर्वाद देता हूँ कि जीवन में आप ऋषि दयानंद और आर्यसमाज के कार्य को आगे ले जायें और अपने व्यवसाय में भी उन्नति करें। मुझे आर्यसमाज के कई विद्वानों और लेखकों का स्नेह प्राप्त हुआ है पर आज तक इतना हृदयस्पर्शी और सकारात्मक आशीर्वाद किसी भी सज्जन ने नहीं दिया था। उनसे मिलने की उत्सुकता और अधिक बढ़ गयी।

दूरभाष से वार्तालाप में मैंने ठाकुर काहन चन्द्र वर्मा लाहौर वाले का नाम लिया जिनका कार्य क्षेत्र मूल रूप से कोलकाता था और उन्होंने भवानीपुर मिशन कॉलेज के पादरी जे एन फ़र्कुहर से लिखित शास्त्रार्थ ईसा मसीह के अस्तित्व को लेकर किया था। यह शास्त्रार्थ क्राइस्ट ए मिथ नामक पुस्तक में छपा था जिसकी दुर्लभ प्रति मुझे केरल में स्वर्गीय आचार्य नरेंद्र भूषण जी से प्राप्त हुई थी। उपाध्यायजी के कहने पर मैं अपने साथ इस दुर्लभ पुस्तक की एक छाया प्रति भी कोलकाता ले गया था। ज्ञात रहे की उपाध्याय जी ने कोलकाता आर्यसमाज के सौ वर्ष के इतिहास के साथ साथ बंगाल में **आर्यसमाज के शास्त्रार्थ का इतिहास** विषय पर अपनी लेखनी से प्रकाश डाला है। इसलिए ठाकुर काहन चन्द्र वर्मा का उल्लेख और अधिक महत्वपूर्ण बन गया था क्योंकि इन दोनों पुस्तकों में वर्मा जी का उल्लेख नहीं हैं। उपाध्याय जी के लिए यह बात नवीन थी इसलिए इस पुस्तक की महत्ता और अधिक बढ़ गयी।

उपाध्याय जी के दर्शन और उनका आशीर्वाद

कोलकाता पहुँच कर मैं उपाध्याय जी के दर्शन करने उनके निवास 'ईशावास्य' कालिंदी में पहुँचा तो प्राचीन ब्राह्मणों के समान उनकी गंभीर वाणी ने मुझे अभिभूत कर दिया। वृद्धावस्था में बिस्तर पर लेटे हुए और चलने फिरने में भी असमर्थ आर्य विद्वान् के मुख से सकारात्मक और प्रोत्साहन देने वाली बातें सुनकर मन में एक ही निश्चय आया कि शारीरिक दुःख को भोगते हुए भी सात्विक वृतियाँ और जीवन में आध्यात्मिक उन्नति वृद्धावस्था में मनुष्य का कितना साथ देती हैं। केवल शाब्दिक ज्ञान से ऐसी अवस्था में कोई भी साधारण व्यक्ति झुंझलाता ही रहेगा। उपाध्यायजी ने मेरी विनती पर मुझे अपने पुस्तकालय में से कई पुस्तकें आशीर्वाद रूप में दीं जैसे 1837 में प्रकाशित बाइबिल की प्रति, ओरिजिन एंड ग्रोथ ऑफ़ बाइबिल (1925) पादरी संडरलैंड द्वारा लिखित, जिसका उल्लेख स्वामी वेदानन्द तीर्थ जी ने भी किया है। तुलसी स्वामी कृत 'दयानंद भास्कर' जो कि दयानंद तिमिर भास्कर का उत्तर है, आर्य मुनि जी कृत उपनिषद् भाष्य, सुखदेव विद्या वाचस्पति जी द्वारा सम्पादित ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका की दुर्लभ प्रति जिसे गोविन्दराम जी ने कोलकाता से प्रकाशित किया था, आदि भेंट किये। इससे

अपने कोलकाता प्रवास से मैंने यह संकल्प लिया है कि जीवन में काहन चन्द्र वर्मा जी द्वारा लिखे अन्य ग्रंथों को खोज कर उनकी लेखावली को उनके जीवन चरित के साथ प्रकाशित करूँ, जिससे आने वाली युवा पीढ़ी उनसे परिचित हो सके।

मेरी उनके प्रति श्रद्धा और अधिक बढ़ गयी क्योंकि ऐसी अप्राप्य सामग्री को आजकल के आर्य लेखक नौजवानों को दर्शन करवाने से पीछे हटते हैं। इसके विपरीत 'खूब स्वाध्याय करो' और अपने व औरों के ज्ञान में वृद्धि करो रुपी आशीर्वाद भी पुस्तकों के साथ में उपाध्यायजी से मुझे मिला। उपाध्यायजी से यह भेंट जीवन भर मेरे स्मृति पटल पर उनके प्रति श्रद्धा और सहयोग के लिए चिरस्थायी रहेगी।

ईश्वर चन्द्र विद्यासागर को लेकर विचार

उपाध्याय जी से एक चर्चा स्वामी दयानंद के जीवन काल में कोलकाता में हुई सभा के विषय में भी हुई जिसमें स्वामीजी की मान्यताओं के विरुद्ध पौराणिक समाज ने अपना पक्ष रखा था। चर्चा का विषय ईश्वरचन्द्र विद्यासागर द्वारा उस सभा में भाग लेना अथवा न लेना था। उपाध्याय जी का पक्ष था कि स्वामी दयानंद के देहावसान पर ईश्वर चन्द्र जी द्वारा स्वामीजी की स्मृति में अपने विचार प्रकाशित करना यह दर्शाता है कि उनकी स्वामीजी के प्रति श्रद्धा थी। मेरा यह विचार था कि जिस प्रकार भारतेंदु हरिश्चन्द्र के विचार-परिवर्तन कालांतर में हुए थे, उसी प्रकार ईश्वर चन्द्र जी के भी विचारों में परिवर्तन हो सकता है क्योंकि चांदपुर मेले में हुए शास्त्रार्थ 'सत्य धर्म विचार' को अंग्रेजी में सर्वप्रथम दुर्गाप्रसाद जी ने लाहौर से 1889 में Triumph of truth के नाम से प्रकाशित किया था। उसमें दुर्गाप्रसाद जी ने स्वामी दयानंद जी की संक्षिप्त जीवनी भी प्रकाशित की है और उसमें उन्होंने ईश्वरचन्द्र जी का नाम इस सभा में भाग लेने वालों में दिया है। इस सभा के काल में और दुर्गाप्रसाद जी के लेखन में केवल 6-7 वर्षों का अंतर होना मुझे ऐसा मानने को प्रेरित करता है कि ईश्वरचन्द्र जी ने भाग लिया था। मेरा विचार यह है कि इस विषय पर और अनुसन्धान होना चाहिए।

ठाकुर काहनचन्द्र वर्मा जी का आर्यसमाज को योगदान

ठाकुर काहनचन्द्र जी सरीखे- आंग्ल भाषा में ईसाई मत पर लिखने वाले विद्वान्- आर्यसमाज में गिने चुने ही हुए हैं जिन्होंने अपना कार्यक्षेत्र उन क्षेत्रों को बनाया था जहाँ आर्यसमाज का प्रचार लगभग न के बराबर था। वर्मा जी ने केरल, कर्णाटक, तमिलनाडू, श्रीलंका, बंगाल, बिहार, आंध्रप्रदेश के उन क्षेत्रों में, जहाँ ईसाई मत का प्रचार अधिक था, वैदिक धर्म का प्रचार करने का निश्चय किया था। केरल में तो टीपू सुल्तान द्वारा जबरदस्ती मुस्लिम बनाये गए अनेक हिंदुओं को आपने शुद्ध कर वापिस वैदिक धर्म में दीक्षित किया था। आपकी भाषण क्षमता और ईसाई मत की परीक्षा इतनी प्रभाशाली थी कि 4.12.1935 को Quilon केरल में आपके भाषण को सुन कर CID ने कमिश्नर को यह रिपोर्ट भेजी कि जहाँ कहीं भी वर्मा जी केरल में भाषण देने जायें वहाँ वहाँ इन पर नजर रखी जाये, क्योंकि इनके भाषण से दंगे होने की आशंका है। वर्मा जी ने आंध्र प्रदेश के गुंटूर में युवकों के समक्ष भाषण देते हुए कहा था कि जब तक जातिवाद का नाश नहीं होगा और दलित समाज को साथ में लेकर नहीं चला जायेगा तब तक हिंदुओं में एकता स्थापित नहीं हो सकती। वर्मा जी ने केरल में नारायण गुरु के गुरु चटटमपी स्वामिगल से 'ब्राह्मण ग्रन्थ वेद नहीं, खेद हैं' और अद्वैतवाद विषय पर शास्त्रार्थ भी किया था। यह शास्त्रार्थ बाद में स्वामीजी शिष्य ने मलयालम में भी प्रकाशित किया था। जिस समय स्वामी श्रद्धानंद दक्षिण भारत प्रचार के लिए गए तब वर्माजी मद्रास में ही थे। ऐसे महान वैदिक मिशनरी को आर्यसमाज ने भुला दिया यह अत्यंत खेद की बात हैं। उपाध्यायजी से बात कर वर्मा जी की लेखावली की खोज का विचार मन में आया। आर्यसमाज में आर्य लेखकों के सन्दर्भ ग्रन्थ को लेकर अगर कोई कार्य व्यवस्थित रूप से किया है तो डॉ0 भवानीलाल भारतीय जी ने आर्य लेखक कोष के माध्यम से किया है। इस कार्य को अन्य विद्वानों को आगे बढ़ाना चाहिए था।

काहनचन्द्र जी वर्मा की 5 पुस्तकों के नाम डॉ0 भारतीय द्वारा लिखित आर्य लेखक कोष से पता चला-

1. Christ a Myth
2. Is not Christianity a false and favolous religion
3. Hindus: A Dying nation and how to revive it?
4 The History of Christ
5. The True Religion

इनमें से दो पुस्तकें अमरीका और ब्रिटेन के पुस्तकालयों में माइक्रोफिल्म के रूप में मिली हैं।

इसके अतिरिक्त जिस पुस्तक का मुझे इन्टरनेट के माध्यम से पता चला वह थी- The Hindu Woman as a Warrior and as a Ruler; Research into Ancient History-Lahore June 1901

नेशनल लाइब्रेरी व रोयल एशियाटिक लाइब्रेरी में खोज

इन पुस्तकों और आर्यसमाज की अन्य पुस्तकों के विषय में जानकारी प्राप्त करने के लिए मेरा नेशनल लाइब्रेरी जाने का निश्चय हुआ। वहाँ भाग्य ने मेरा साथ दिया और वहाँ मुझे वर्मा जी की एक पुस्तक indus: A Dying nation and how to revive it? की प्रति मिल गयी जिसे मैं फोटोकॉपी करवा लाया।

आर्यसमाज से सम्बन्धित जिन दुर्लभ पुस्तकों का मुझे कैटेलॉग से नेशनल लाइब्रेरी से पता चला, वे थीं–

1. आर्य मुनि जी द्वारा लिखित वेद मर्यादा भाग 1 (यह स्वामी दयानंद जी के वेद भाष्य पर उठाई गयी शंकाओं का उत्तर है) शेष दो भाग और प्रकाशित किये गए थे जो यहाँ उपलब्ध नहीं हैं।

2. आर्यसमाज से ईसाई BRANDON .G (पुस्तक प्राप्त नहीं हुई, केवल कैटेलॉग में वर्णन था)

3. WHAT IS ARYASAMAJ? शंकर नाथ पंडित द्वारा लिखित ट्रैक्ट (शंकर नाथ पंडित आर्यसमाज बंगाल के प्राण थे जिन्होंने हिंदी, अंग्रेजी और बंगाली में 100 के करीब पुस्तकें लिखीं थी।)

4. DAYANAND AND THE INDIAN PROBLEM - C. PARMESWARAN (अंग्रेजी में लिखे गये इस ग्रन्थ का विषय है कि स्वामी दयानंद की शिक्षाओं से ही भारत का कल्याण हो सकता है।)

5. A CASE OF SATYARTH PRAKASH - CHANDRA .S सिंध सत्यार्थ प्रकाश केस से सम्बंधित पुस्तक है।

6. दयानंद जीवन चरित्र और समालोचना, जगन्नाथ दास 1898 स्वामी जी के विरुद्ध लिखी गयी थी। (पुस्तक प्राप्त नहीं हुई, केवल कैटेलॉग में वर्णन था)

7. आर्यसमाज –शिवप्रसाद सितारे हिन्द निवेदन राजा का सज्जन आर्य पुरुषों से–1880– स्वामी दयानंद ने इस पुस्तक का उत्तर दिया था। (पुस्तक प्राप्त नहीं हुई केवल कैटेलॉग में वर्णन था)

इनके अतिरिक्त आर्यसमाज से सम्बंधित 200 के करीब अन्य पुस्तकों का नाम मैंने कैटेलॉग में पढ़ा जो सामान्य रूप से प्राप्य हैं।

नेशनल लाइब्रेरी के पश्चात में रोयल एशियाटिक लाइब्रेरी गया जहाँ मुझे एक दुर्लभ पुस्तक की फोपोकॉपी प्राप्त हुई जो स्वामी दयानंद के विरुद्ध 1925 में लिखी गयी थी। इसका नाम था स्वामी दयानंद इन थे लाइट ऑफ़ ट्रुथ। लेखक देवसमाजी अमर सिंह थे।

अल्प समय मैं जितनी सामग्री प्राप्त कर सकता था मैंने उसका प्रयास किया। इस लेख के माध्यम से मैं अपनी खोज की अन्य अनुसन्धान करने वालों से चर्चा कर रहा हूँ जिससे कि इस कार्य को आगे बढ़ाया जा सके। क्योंकि अनुसन्धान एक या दो व्यक्ति अथवा एक या दो दशक भर का कार्य नहीं हैं अपितु सैकड़ों वर्ष और हजारों व्यक्तियों के परिश्रम का विषय है।

अपने कोलकाता प्रवास से मैंने यह संकल्प लिया है कि जीवन में काहन चन्द्र वर्मा जी द्वारा लिखे अन्य ग्रंथों को खोज कर उनकी लेखावली को उनके जीवन चरित के साथ प्रकाशित करूँ, जिससे आने वाली युवा पीढ़ी उनसे परिचित हो सके। अगर किसी व्यक्ति के पास इन पुस्तकों से सम्बंधित किसी भी प्रकार की जानकारी हो तो मुझसे अविलम्ब संपर्क करें। उपाध्याय जी से परिचर्चा मुझे जीवन भर प्रेरणा देती रहेगी।

राष्ट्र–नायको! जागो!

उससे न बरतो भारतीयो! तुम यों नरमी।
'पाक' है 'नापाक' दुष्ट और सबसे अधर्मी।।
'जैसे को तैसा' लायक है ये दुष्ट कुकर्मी।
'राष्ट्र–रक्षकों' की गर्दन काटना हद है बेशर्मी।
कार्य करो तुम दण्डात्मक मिल जुलकर यों तुरत।
मिल न पाये पापी को मरने के लिए भी फुरसत।।
झांसी की रानी सुभाष का रक्त है तुम में न करो नरमी।
शांति की भाषा जानता केवल शांतिधर्मी।।
उठो जागो कायरता त्यागो कहते स० सम्पादक सहदेव।
घबराओ मत सत्य न्याय पर साथ देते सदा त्रिदेव।।
पाक अधिकृत कश्मीर ले न सकते तो हमको लानत है बेशर्मी।
हम शांति–क्रांति के संवाहक हैं हमको समझें न कमजोर कुकर्मी।।
यही सन्देश देता है हमको बसन्त और उदीयमान मकर,
राष्ट्र–नायको! जागो! काट डालो राष्ट्रविरोधियों के शर।।

फणीन्द्र कुमार पाण्डेय
ग्राम सल्ला, सिमल्टा, पोस्ट फूंगर,
चम्पावत–२६२५२३ (उत्तराखण्ड)

पुनर्जन्म समीक्षा

ईश्वरसिंह आर्य, प्रधानाध्यापक (से० नि०) मस्तापुर, रेवाड़ी

वैदिक सिद्धान्त पुनर्जन्म को ध्रुव सत्य मानता है। सभी प्राणी सुख चाहते हैं, सभी की कामना होती है कि मेरा अग्रिम जन्म वर्तमान से भी श्रेष्ठ हो। कर्मों का फल अवश्य प्राप्त होता है। कर्मो का वर्गीकरण चार श्रेणियों में किया जा सकता है। शुभ, अशुभ, मिश्रित, निष्काम। शुभ का फल शुभ, अशुभ का फल अशुभ ही होता है। किसान खेती करता है। उससे कुछ शुभ तथा कुछ अशुभ कर्म भी हो जाते हैं, अतः मिश्रित कर्मों में शुभ, अशुभ दोनों शामिल होते हैं। निष्काम कर्मों के फल हमेशा पुण्य लिये हुये होते हैं। जिन कर्मों का फल इस जन्म में मिलता है वे दृष्टजन्मवेदनीय कहलाते हैं। जिनका फल आगामी जन्मों में मिलता है वे अदृष्टजन्मवेदनीय कहलाते हैं। कर्म समुदाय के तीन फल इस प्रकार हैं- जाति आयु भोग।

जाति- जैसे मनुष्य, गौ, अश्व, कुत्ता, कबूतर, वृक्षादि।

आयु-जैसे पुरुष की १००, गाय की २० वर्ष, अश्व की ३० वर्ष, कबूतर की ६ या ७ वर्ष। प्रत्येक प्राणी की आयु अलग से निर्धारित होती है।

भोग-मनुष्य के लिए अन्न, दूध, खीर, वस्त्र, भवन, यान आदि; गाय, बकरी, हाथी आदि शाकाहारी; सिंह भेड़िया मांसाहारी की श्रेणी के हैं। जीव कर्मानुसार गर्भाशय में जाता है। कर्त्ता को ही कर्म फल प्राप्त होता है। मन, बुद्धि, बल और पराक्रम से तीन कामना होती हैं। प्राणैषणा, धनैषणा, लोकैषणा अर्थात् पुनः जन्म की कामना।

कौन किसकी माता होगी कौन पिता होगा ये कर्मानुसार ईश्वरीय न्याय व्यवस्था पर निर्भर करता है। जीवात्मा बार-बार जन्म लेता है- कभी जलों में, कभी औषधियों में, कभी नाना भूत प्राणियों में। जीव अमर होकर भी मरणधर्मा बना हुआ है।

एक ही माता-पिता की एक जैसी पालित पोषित संन्तानों में एक विद्वान्, एक मूर्ख हो जाता है। इससे पूर्वजन्म का अन्तर सिद्ध होता है। वेद कहता है कर्मफल में त्रुटि नहीं होती।

व्यासजी कहते हैं- जैसे बछड़ा हजारों गायों में अपनी मां को पहचान लेता है उसी प्रकार मनुष्य के किये हुऐ कर्म उसका पीछा नहीं छोड़ते।

मनुष्य अपने निज कर्मों से आयु को क्षीण भी कर लेता है ब्रह्मचर्य का पालन, आहार-विहार, सदाचार से उसमें वृद्धि भी सम्भव है।

पूर्वजन्म का कोई कर्म किसको कब भोग करा दे इसके अनेकों उदाहरण देखने को मिलते हैं- खली जो बोरियां ढ़ोया करता था, अभिनेता बन गया। राजीव गांधी राजनीति से दूर थे, प्रधानमंत्री बन गये। वैज्ञानिक ए पी जे अब्दुल कलाम के विषय में कोई सोच भी नहीं सकता था कि देश का राष्ट्रपति होगा। ये सब पूर्वजन्म कृत कर्मों का भोग ही है।

एक दिलचस्प किस्सा पढ़ने को मिला। एक व्यक्ति ने किसी की हत्या कर दी थी लेकिन साक्षी के अभाव में बरी हो गया। दूसरी बार अपराधी न होते हुए सजा पाई। न्यायाधीश के समक्ष कबूल किया- हाँ, मैंने पहले केस में हत्या की थी, इस केस में नही। उसका पूर्वकृत कर्म फल था, जो अब भोगेगा।

नियत विपाक वाले कर्माशय को ही भाग्य कहते हैं, जिसका फल इस जन्म में या पर जन्म में अवश्य भोगना पड़ता है। झज्जर गुरुकुल का एक दृष्टांतः स्वामी ओमानन्द जी ने एक पशु पालक के पशुओं को पानी पीने से रोक दिया था। पशुओं का अभिशाप समझें- कुएँ का पानी सूख गया।

कभी-कभी अकर्ता को फल का भोग होता देखा जा सकता है। भूकम्प व प्राकृतिक आपदाओं में ऐसा होता है। गुरु गोविन्द सिंह के दो बच्चों को दीवार में चुनवा दिया गया।

पाप का शोधन कहा गया है, लेकिन किया पाप बिना फल पाये नष्ट नहीं होता। हाँ प्रायश्चित हो सकता है कि मैं भविष्य में पाप नहीं करुँगा। जो पाप हो चुका वह फल देगा ही।

फल भोग के दो मार्ग- पितरों अर्थात् ज्ञानियों और देवों अर्थात् विद्वानों का पितृयान कहताता है। विद्या, विज्ञान रहित साधारण मनुष्यों का देवयान। धर्माचरण से उच्च कुल प्राप्त होता है। अधर्माचरण से नीच योनि मिलती है।

कोई जन्म को सकारण मानता है, कोई अकारण। बहुत से आदमी प्रत्यक्ष को ही मानते हैं, परोक्ष को नही।

पुर्नजन्म परोक्ष है। कुछ लोग माता-पिता को जन्म का कारण मानते हैं, कुछ स्वभाव को जन्म का कारण मानते हैं, कुछ दूसरे लोग आकस्मिक संयोग को जन्म का कारण मानते हैं। जो कर्म हम करते है वे निम्न श्रेणियों में विभाजित होते हैं-

क्रियमाण- जो इस जन्म में संग्रह किये जाते हैं, ये कर्म नवीन संस्कारों को संचित करते हैं। कुछ क्रियमाण कर्म ऐसे भी हैं जो इसी जन्म में प्रारब्ध कर्मों के साथ मिलकर फल प्रदान करते हैं।

सञ्चित कर्म- जिन कर्मों का फल मिलना शेष है, ऐसे अनेक जन्म जन्मान्तर के कर्मों को सञ्चित कर्म कहते हैं।

प्रारब्ध- जिन कर्मों का फल मिल रहा है, जैसे:- शरीर आदि रूप फल मिलना प्रारम्भ हो गया है।

वेद का मत है कि सब प्राणियों को पहले किये हुए कर्म का फल वायु, जल, अग्नि आदि के द्वारा इस जन्म तथा पुनर्जन्म में मिलता है।

महर्षि दयानन्द की मान्यता- (पुनर्जन्म) वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। उनकी मान्यता वेद पर आधारित है। जन्म लेने वाले की मृत्यु और मृत्यु प्राप्त करने वाले का जन्म निश्चित है।

कुछ लोग कहते हैं कि पूर्व जन्म की बातें याद क्यों नही रहती? इसका उत्तर है- जीव अल्पज्ञ है। जीव त्रिकालदर्शी हो नहीं सकता, इसलिए जन्मों की बात तो दूर आज से ५-७ वर्ष पूर्व की बातें याद नहीं रहती। याद रहनी भी नही चाहियें, इसी में भला है।

कर्मफल सिद्धान्त- ईश्वरीय न्याय व्यस्थानुसार अधिक पाप करने पर नीच योनि। श्रेष्ठ कर्म करने पर देव योनि= विद्वानों का शरीर मिलता है। पाप पुण्य सम होने पर साधारण मनुष्य की योनि प्राप्त होती है।

जीवन मरण उत्तम ज्ञान कर्म उपासना तक चलता है। जब तक जीव मोक्ष नहीं पा लेता तब तक जीवन मरण चक्र बना रहता है। जो मनुष्य पूर्व जन्म में धर्माचरण करता है, वह अगले जन्मों में अनेक उत्तम शरीरों को धारण करता है। अधर्माचारी नीच से नीच योनियों में जाता है।

पूर्व जन्म के किये गये पाप-पुण्य के फलों का भोग करने के लिए जीवात्मा पूर्व शरीर को छोड़ के वायु के साथ रहता है। पुनः जल औषध या प्राणादि में प्रवेश करके वीर्य में प्रवेश करता है। तदनन्तर गर्भ में प्रवेश कर पुनः जन्म लेता है।

विज्ञान का नियम है कि किसी भी पदार्थ के अस्तित्व का पूरी तरह विनाश नहीं होता। जो आँखों से दिखाई नहीं दे रहा उसका स्वरुप बदल गया है।

जीवात्मा के दो भिन्न शरीरों के होने के कारण वर्तमान का ही ज्ञान रहता है। वैसे भी मनुष्य की भूलने की प्रवृति है। पूर्व जन्म की स्मृति न होना हितकर है। यह हमारे लिए ईश्वर का वरदान है। नहीं तो पुरानी यादों में सदा खोये रहते, भविष्य में उन्नति न कर पाते।

मोक्ष जीवात्मा का होता है यह ध्रुव सत्य है। किये गये कर्मों का फल भोग चुकने पर मोक्ष होता है। यदि हमने वैदिक साहित्य न पढ़ा होता तो हम भी आज मोक्ष को न जानते और न मानते। अतः मोक्ष, जीवात्मा की अमरता व पुनर्जन्म में उन्हीं लोगों को विश्वास नहीं होता जो अज्ञानी, हठी व अंहकारी होते हैं।

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः।।

गीता में शरीर को जीवात्मा का वस्त्र बताया गया है, पुराना हो जाने पर जीवात्मा उसे बदलता है, अतः पुनर्जन्म होता है। जीवात्मा को अविनाशी कहा गया है अतः मृत्यु के पश्चात् उसका जन्म होना स्वभाविक है।

अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्।।

कृतहानि दोष से बचने के लिए परजन्म का मानना आवश्यक है। बाईबल भी मनुष्य का स्वभावतः पापी होना स्वीकार करता है, अतः पुनर्जन्म को माना जावे, नहीं तो पाप कहाँ से आया?

इसी प्रकार मुसलमान लोग भी कयामत के दिन सभी कबरों से रुहें खड़ी होना मानते हैं। मुर्दे उठ खड़ा होना पुनर्जन्म ही है।

वेद, गीता, धार्मिक पुस्तकें सभी पुनर्जन्म की बातें कहते हैं। अब भी शंका है तो उसका क्या ईलाज!

फरियादे बिस्मिल

किस तरह का है यह मजमून समझता हूँ मैं।
अपनी बात को कानून समझता हूँ मैं।।
काम आयेगा यही गुण, बस यही गुण सीखिए,
सीखनी है धुन अगर तो देश की धुन सीखिए।।
लड़ने वाला जान ले इस रंग में हरगिज नहीं।
मेल में जो लुत्फ़ है वह जंग में हरगिज नहीं।।
इससे हो जाती हैं जाहिर पालिसी सरकार की।
पढ़ लिया करता हूँ अक्सर सुर्खियाँ अखबार की।।
हज़रते बिस्मिल कहे क्यूँकर कि हममें जोर है।
वह लिखे हर रंग में, जिसकी कलम में जोर है।।

वेद धर्म रक्षार्थ प्रथम बलिदानी कुमारिल भट्ट

❑डॉ० अशोक आर्य, २०४-शिप्रा अपार्टमेंट, कौशाम्बी, गाजियाबाद उ०प्र०

वेद प्रभु की वाणी है। सृष्टि के आरम्भ में प्रभु ने प्राणी मात्र के लिए वेद ज्ञान का प्रकाश किया था। महात्मा बुद्ध की मृत्यु के पश्चात् इस देश में बौद्ध मत का एकछत्र राज्य स्थापित हो गया तथा वेद धर्म को अपमानित करने की एक परंपरा सी ही आरम्भ हो गयी। ऐसे समय में वेदवेत्ता कुमारिल भट्ट का जन्म जयमंगल नामक गाँव में पं० यज्ञेश्वर भट्ट तथा माता चंद्रकला (यजुर्वेदी ब्राह्मण) के यहाँ हुआ। बालक ने योग्य गुरु के यहाँ वेद, वेदांग तथा अन्य शास्त्रों का अध्ययन किया। उनकी धर्मपरायणता तथा विद्वत्ता के कारण उन्हें भट्ट-पाद तथा सुब्रह्मण्य भी कहा गया। आप के पास अनेक शिष्य विद्याध्ययन के लिए आते थे, जिनमें विश्वरूप, प्रभाकर, पार्थसारथी तथा मुरारिमिश्र मुख्य थे।

कुमारिल वैदिक धर्म के अनन्य भक्त थे। यह वह समय था जब बौद्ध-मत के विकास के साथ ही वेद-प्रचार की दशा निरंतर गिर रही थी तथा वेदों का उपहास उड़ाया जाने लगा था, इससे आप अत्यंत दु:खी थे। आपने बौद्ध मत के खंडन का निश्चय किया। इसके लिए उन्हें बौद्ध मत से सम्बंधित ग्रंथों का अध्ययन करना था, किन्तु बौद्ध ग्रन्थ उपलब्ध न थे। अत: अपने निश्चय को कार्यान्वित करने के लिए आप श्रीनिकेतन नामक एक बौद्ध धर्माचार्य के पास शिष्य स्वरूप जा पहुंचे व बौद्ध मत का अध्ययन करने लगे। एक दिन गुरु ने वेदों की खूब निंदा की तो आपके चेहरे के भाव को तथा आँखों से अविरल बह रहे आंसुओं को देख आपके सहपाठी समझ गए कि आप वेदधर्म अनुगामी है। बस यहीं से आप के विरोधी आप की हत्या की योजना बनाने लगे। एक दिन आप एक मंदिर की ऊँची दीवार पर बैठे थे कि आप की हत्या की योजना को साकार करते हुए आपके सहपाठियों ने आपको धक्का दे दिया। किन्तु आप बच गए। इससे आपका वेद पर दृढ़ विश्वास व निष्ठा और बढ़ गई। किन्तु हाँ, इस घटना से आपको बौद्ध धर्म की सत्यता पर संदेह अवश्य हो गया। आप समझ गए कि जो बौद्ध धर्म भूत-दया और अहिंसा को मानता है, उसके अनुयायियों ने मेरी वेद के प्रति आस्था को देख मुझे मारने का प्रयास किया तो इसमें दया व अहिंसा कहाँ है? यह तो अन्य धर्मावलम्बियों को अपनी ठोकर में रखना चाहते हैं। मैं इन पाखंडियों से संसार को बचाने का यत्न करूंगा।

अब कुमारिल भट्ट जी वैदिक कर्मवाद का प्रचार करने लगे। ऐसा करते हुए आप एक दिन चंपानगरी जा पहुंचे। इस नगरी का राजा सुधन्वा भी बौद्ध मतानुगामी था, जबकि उसकी पत्नी सच्चे अर्थों में वेदानुरागी थी। इस नगरी में घूम-घूम कर भट्ट सब परिस्थितियों का अध्ययन करने लगे। इस मध्य ही उनकी भेंट राज्य के माली से हुई, जहाँ से उन्हें राजवंश की सब स्थिति का पता चला तथा यह भी ज्ञान हुआ कि राजरानी बौद्ध मतानुगामिनी नहीं है। रानी विष्णु की उपासक है तथा माली उसके ही लिए फल फूल एकत्र करने में लगा है। भट्ट ने उस माली के माध्यम से रानी जी को अपना परिचय भेज दिया, जिसे सुन रानी को अत्यधिक प्रसन्नता हुई। एक दिन भट्ट राजभवन के पास से निकल रहे थे तो उनके कानों में चिंता से भरे स्वर पड़े-

"किं करोमि, क्व गच्छामि को वेदानुद्धरिष्यति?"

भाव यह कि क्या करूँ? कहाँ जाऊं? वेदों का उद्धार कौन करेगा?

यह सुन कुमारिल जी बोले-

"मा विषाद वरारोहे! भट्टाचार्योऽस्मि भूतले।"

अर्थात हे रानी! खेद न कर! मैं कुमारिल भट्टाचार्य अभी इस पृथ्वी पर मौजूद हूँ। यह सुन रानी ने कुमारिल को अपने पास बुला कर अपनी व्यथा कथा सुनाई।

कुमारिल से मिलकर रानी को बहुत संतोष हुआ तथा उनसे उन्हें बौद्ध मत की अनेक कमियों का भी पता चला। उन्हें यह भी कहा गया कि इन युक्तियों को प्रसंगवश राजा के सामने रखा करें ताकि धीरे धीरे राजा के मन में पुनर्विचार के भाव पैदा हों। विदुषी रानी ने ऐसा ही किया। धीरे-धीरे राजा का हृदय बदलने लगा तथा वेद धर्म के प्रति उनका अनुराग बढ़ने लगा। वे वेदों को सम्मान देने लगे। इस मध्य ही कुमारिल ने बौद्ध मत के खंडन के लिए सात ग्रंथों की रचना कर डाली। इतना ही नहीं, बौद्धों का सामना करने के लिए अपने शिष्यों की एक विशाल मंडली भी तैयार कर ली। अब स्थान-स्थान पर जाकर वे वेद का मंडन तथा बौद्ध का खंडन करते हुए शास्त्रार्थ कर रहे थे। बौद्ध धर्मगुरु उनके नाम से ही घबराने लगे थे।

राजा सुधन्वा के कानों तक कुमारिल के नाम की चर्चा पहुंच चुकी थी तथा वे भी उन्हें मिलने के इच्छुक थ कि एक दिन अवसर पाकर कुमारिल राजा के यहाँ जा पहुंचे। यहाँ एक विशाल सभा का आयोजन हुआ तथा बड़े धुरंधर बौद्ध विद्वानों को बुलाकर शास्त्रार्थ का आयोजन किया गया। एक ओर बौद्ध धर्माचार्यों की विशाल सेना तथा दूसरी ओर अपने दल सहित आचार्य कुमारिल। दर्शकों व श्रोताओं से राज-भवन भरा था। इस मध्य ही समीपस्थ वृक्ष से कोयल की कूक उठी, जिससे सभा भवन गूंज उठा। इस अवसर पर कुमारिल भट्ट ने जो श्लोक पढ़ा उसका भाव था- 'अरे कोयल! मलिन, नीच और श्रुति-दूषक काक-कुल से यदि तेरा सम्बन्ध न हो तो तू वास्तव में प्रशंसा के योग्य है' यह व्यंग्य राजा और बौद्धों के लिए था। राजा के लिए यूँ कि 'हे राजन! वेदनिंदक लोगों से यदि तेरा सम्बन्ध न हो, तो तू अवश्य ही प्रशंसा के योग्य है'

इस व्यंग्य का मुख्य आशय तो बौद्धों के लिए था, इस कारण वे मन ही मन कुमारिल पर बहुत चिढ़े। शास्त्रार्थ आरम्भ हुआ। दोनों ओर से तर्क की तलवारें टकराने लगीं, बौद्धों के वेदविरुद्ध तर्कों का कुमारिल ने खंडन किया तथा अपने पांडित्य का प्रदर्शन करते हुए वेदों की सभ्यता, सत्यता, न्यायप्रियता, सद्‌गुण, कर्मवाद, कर्मफल, उपासना, मुक्ति तथा व्यक्तित्ववाद आदि को इस उत्तमता से सिद्ध किया कि प्रत्येक व्यक्ति को वेद की विमल मूर्ति के दर्शन होने लगे। राजा सहित सब लोग कुमारिल की विद्वता पर मोहित हो गए। सबने स्वीकार किया कि वेद ही मानवता का सर्वोच्च व दिव्यज्ञान है। यह भी सिद्ध हो गया कि बौद्ध सिद्धांत सर्वथा भ्रामक, भ्रान्तिमूलक व अनिष्टकारी हैं। इससे सब संतुष्ट हुए। इस अवसर पर बौद्धों पर धिक्कारें व लानतें पड़ने से वे अपना मुंह लटकाए सभा से चले गए। इस सभा में यह भी सिद्ध हो गया कि सार्वदेशिक व सार्वकालिक पूर्ण ज्ञान वेद में ही है। यह भी सिद्ध हुआ कि बौद्धों का आचरण पापपूर्ण है। राजा इस ज्ञानोपदेश से अत्यंत प्रसन्न हुए। राजा कुमारिल के शिष्य हो गए। अब उनके प्रभाव से लोग पुन: वैदिक धर्म के अनुरागी बनने लगे। पुन: वेदों का प्रचार हुआ तथा यज्ञ आदि कर्म होने लगे। वेद की ध्वनि से देश गूंजने लगा। इस प्रकार कुमारिल का उद्देश्य पूर्ण हुआ तथा उन्हें मानसिक संतोष मिला। तो भी कुमारिल को शान्ति कहाँ थी। एक चिंता, एक कष्ट उन्हें सदा सताता रहता था कि उन्होंने धोखे से गुरु से बौद्ध मत की शिक्षा प्राप्त की थी, इस प्रकार उन्होंने एक भारी गुरुद्रोह किया था। इसका प्रायश्चित करने का कुमारिल ने निश्चय किया। शास्त्रों के अनुसार गुरुद्रोह का दंड तुषानल; भूसी की आग में जलना था। कुमारिल ने इस निमित्त स्वयं को तैयार किया तथा प्रयाग के लिए रवाना हुए। त्रिवेणी-संगम के पास उन्होंने तुषाग्नि में प्रवेश किया। जलती चिता में कुमारिल अविचल शान्ति तथा दृढ़ता के साथ शांत रूप में बैठे थे। उनके मुख-मंडल से तेज, शान्ति, कान्ति की चिंगारियां प्रस्फुटित हो रहीं थीं। इसी मध्य वहां जगत्‌गुरु शंकराचार्य जी का आगमन हुआ।

जिस प्रकार कुमारिल उत्तर भारत में बौद्धों से शास्त्रार्थ में लगे थे, उसी प्रकार शंकराचार्य जी भी दक्षिण भारत में धर्म की प्रतिष्ठा में लगे थे। उन्होंने कुमारिल जी के सम्बन्ध में चर्चा सुनी तो उन्हें मिलने का निश्चय कर प्रयाग आये, किन्तु यहाँ उनके तुषाग्नि में प्रवेश की चर्चा सुन वे दौड़े हुए त्रिवेणी संगम पहुंचे तथा शांतचित्त कुमारिल को जलती अग्नि में बैठे देख दंग रह गए तथा अनायास ही उनके मुख से निकला-

"धन्य है कुमारिल भट्ट! वेदों का उद्धार करना तुम्हारा ही काम था। शास्त्रों के प्रति इसी अविचल श्रद्धा, अपूर्व कर्तव्यनिष्ठा और अगाध धर्मपरायणता इस पृथ्वी तल पर तुम्हारी ही देखी गयी। तुम धन्य हो। तुम्हारी जितनी भी प्रशंसा की जाए, कम है।"

धधकती चिता के सम्मुख वार्तालाप करने में विलम्ब का अवसर न था अत: शीघ्रता से अपना परिचय देते हुए बोले -"मैं आपसे शास्त्रार्थ करना चाहता था।" शंकर ने उन्हें स्वरचित भाष्य आदि भी दिखाए। उन्हें देख कुमारिल बहुत प्रसन्न हुए। आत्मदाह का कारण बताते हुए कहा-

"मैं तो शास्त्रार्थ करने में असमर्थ हूँ। आपका उद्देश्य निश्चय ही बड़ा उत्तम है। मैं अपना काम कर चुका हूँ। अब आप अपने उद्देश्य की पूर्ति के निमित्त मेरे प्रधान शिष्य मंडन मिश्र से मिलिए।" यह भी कहा कि "जब तक मेरा शरीर भस्म न हो जाए, तब तक आप मेरे सामने ही खड़े रहिये। मुझे आपसे बड़ा प्रेम है; क्योंकि आपने वेदों के उद्धार का झंडा उठाया है।"

कुमारिल मौन हो गए तथा अग्नि जोरों से जलने लगी, पुण्यात्मा कुमारिल प्रायश्चित करते हुए भस्म हो गए।

धन्य है कुमारिल, जिस ने धर्म को पुन: स्थापित करने के लिए आजीवन प्रयत्न किया तथा धर्म स्थापनार्थ स्वयं ही अपना बलिदान भी दिया। आप न केवल प्रकांड पंडित ही थे अपितु बौद्ध धर्म के मर्म को भी समझते थे। इस काल में वेद की शिक्षाएं रसातल की ओर जा रही थी। आप ने वेद की रक्षा की। इस कारण आपके बलिदान के साथ ही आप का नाम सदा के लिए अमर हो गया।

क्या युवा वर्ग भटक रहा है?

❑प्रो॰ शामलाल कौशल, मकान नं॰ ९७५ बी/ २०, ग्रीन रोड रोहतक-१२४००१

अगर देश तथा समाज का सुधार किया जाना है तो हमारे युवा वर्ग को सोचना पड़ेगा कि वे कहां जा रहे हैं। उन्हें माता-पिता, बुजुर्गों, अध्यापकों तथा धार्मिक ग्रंथों की अच्छी बातों का अनुसरण करना होगा।

किसी अन्य देश की तरह भारत के लिए भी युवा वर्ग आशा तथा सुनहरे भविष्य के निर्माण के आधार के रूप में जाना जाता है क्योंकि यह ऊर्जा से परिपूर्ण है। देश के स्वतंत्रता संग्राम में भगतसिंह, राजगुरु, रामप्रसाद बिस्मिल, सुभाषचन्द्र बोस आदि नौजवानों की भूमिका को क्या भूला जा सकता है? वैसे भी जब कभी किसी घर-परिवार पर मुसीबत आती है तो युवा ही उम्मीद की किरण के तौर पर नजर आते हैं। जिस तरह हमारे युवाओं ने कम्प्यूटर, आई॰ टी॰, अंतरिक्ष अनुसंधान, डाक्टरी, सी॰ए॰, विज्ञान तथा तकनीक के विकास में सारी दुनिया में धूम मचा रखी है, जिस तरह हमारे होनहार नवयुवकों, नवयुवतियों ने क्रिकेट के क्षेत्र में दुनिया में झण्डा फहराने के साथ-साथ एशियन, कॉमनवैल्थ तथा ओलम्पिक खेलों में मैडल जीते हैं, उससे हर भारतीय का सिर गर्व से ऊँचा उठ जाता है। सच ही कहा गया है कि युवा वर्ग के शब्दकोष में असंभव शब्द नहीं होता।

लेकिन इन सब के बावजूद जितना भटकाव आज के युवा वर्ग में देखने को मिलता है वह इससे पहले कभी नहीं था। अधिकांश युवक तथा युवतियां क्रोधी, अहंकारी, हर काम में जल्दबाजी करने वाले, किसी बड़े छोटे की परवाह न करने वाले, संस्कारहीन तथा अनुशासनहीन देखने को मिलते हैं। उन्हें जीवन में कोई उद्देश्य दिखलाई नहीं देता। अपने माता-पिता, बड़े-बुजुर्गों तथा अध्यापकों की आज्ञा पालन करना वे अपना अनादर समझते हैं, उनमें अपराधिक प्रवृत्ति प्रबल होती जा रही है जिसके कारण वे हत्या, हिंसा, बलात्कार, राहजनी, फिरौती आदि की तरफ ज्यादा आकर्षित हो रहे हैं।

धूम्रपान, मद्यपान, आलस्य, झूठ, कपट आदि की दलदल में वे धंसे हुए दिखाई देते हैं। उनका धर्म-कर्म से कोई सम्बन्ध दिखाई नहीं देता। वे बिना काम के जल्दी-जल्दी समृद्ध बनकर ऐश्वर्यपूर्ण जीवन व्यतीत करना चाहते हैं। इसलिए कई बार उनके द्वारा गैंग बनाकर आपराधिक गतिविधियों के द्वारा गैर कानूनी ढंग से धन कमाने की बात सुनने को मिलती है। कहना न होगा कि आतंकवादी गतिविधियों में जो गोलीबारी तथा आत्मघाती बम धमाके होते हैं, जिनके फलस्वरूप जान माल का काफी नुकसान होता है, उनमें भी युवा वर्ग प्रमुख तौर पर शामिल होता है।

युवा वर्ग अपने माता-पिता की अवहेलना, अवज्ञा तथा तिरस्कार करता है। वे उनके अच्छे संस्कार तथा आशीर्वाद के बदले में उनकी धन सम्पत्ति ही हड़पना चाहते हैं। उनको अपशब्द बोलना, उनकी अनदेखी करना तथा मारपीट करके घर से निकाल देना या फिर उनसे नौकरों की तरह काम करवाना एक आम बात हो गई है। इतना ही नहीं, वे दहेज के लालच में अपनी पत्नियों को पीटते हैं।

बहुत सारी युवा बहुयें भी अपने सास-ससुर तथा अन्य ससुराल वालों के साथ दुर्व्यवहार करती हैं तथा उनके नाक में दम कर देती हैं। लिव इन रिलेशनशिप तथा समलैंगिकता जैसा नीच आचरण आजकल युवाओं में बढ़ता जा रहा है। उनमें अच्छे चरित्र नाम की कोई चीज दिखाई ही नहीं देती। वे श्रीरामचन्द्र की तरह न तो अपने माता-पिता के आज्ञाकारी हैं और न ही श्रवण कुमार की तरह उनमें अपने माता-पिता के प्रति सेवा भावना देखने को मिलती है।

इन सब बातों को देखकर मन बहुत ही दुःखी होता है। पता नहीं हमारे देश, समाज तथा पारिवारिक जीवन का क्या होगा। अगर देश तथा समाज का सुधार किया जाना है तो हमारे युवा वर्ग को सोचना पड़ेगा कि वे कहां जा रहे हैं। उन्हें माता-पिता, बुजुर्गों, अध्यापकों तथा धार्मिक ग्रंथों की अच्छी बातों का अनुसरण करना होगा। उन्हें सदाचारी, संयमी, परिश्रमी, आज्ञाकारी, सर्वहितकारी, देशभक्त बनना होगा। अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखना होगा।

यह जीवन अमूल्य है। उन्हें ऐसा कोई व्यवहार नहीं करना चाहिए जिससे उन्हें, उनके माता-पिता या देश को शर्मिंदगी हो। इस समय देश में जो राजनैतिक, सामाजिक तथा प्रशासनिक समस्याएं है उन्हें हल करने के लिए उन्हें आगे आकर देश की बागडोर संभालनी चाहिए।

स्वप्न क्यों आते हैं?

स्वामी आत्मानन्द सरस्वती

वैशेषिक भाष्यकार प्रशस्तपादाचार्य के कथन के अनुसार स्वप्न में उड़ने के दृश्य मनुष्य तब ही देखा करता है, जब उसके शरीर में वायु की प्रधानता हो। पित्त के प्रधान होने पर अग्नि में चलने अथवा बड़े-बड़े अग्नि-काण्डों के और कफ के प्रधान होने पर जल पर तैरने या डूबने के स्पप्न दिखाई दिया करते हैं। कारण यह है कि जो तत्त्व शरीर में प्रधान होता है मन में भी वह प्रधान होगा, और इसीलिए उसके प्रभाव का स्वप्न पर असर पड़ना आवश्यक है।

जब हम दिन में कार्य करते-थक जाया करते हैं, रजोगुण निर्बल पड़ जाना है तो तमोगुम की वृत्ति-निन्द्रा प्रकट होकर हमारे सब-इन्द्रियों की शक्ति को ढाँप लिया करती है, इसे ही सुषुप्ति कहते हैं, परन्तु इससे पहली एक और अवस्था है जहाँ बाह्य-इन्द्रियों का काम तो बन्द हो जाता है परन्तु रजोगुण की कुछ मात्रा मन में अभी जागृत रहती है, अतः मन काम करता है। अब उसके कार्य में अशक्त होने के कारण बाह्य इन्द्रियाँ तो उसका साथ देते नहीं, विवश वह बहिर्मुख न होकर अन्तर्मुख हो जाता है। अन्दर उसके अनुभव के लिये और तो कोई विषय था नहीं, चित्त के ऊपर पड़े हुए विषयों की छाया रूप संस्कारों को ही वह देखना आरम्भ कर देता है। रजोगुण की मात्रा अभी इसमें विद्यमान है, चंचल होने के कारण एक स्थान पर टिक नहीं सकता, अतः "कहीं की ईंट कहीं का रोड़ा, भानमती ने कुनबा जोड़ा" की भाँति किसी संस्कार का कोई और किसी का कोई अङ्ग लेकर एक नई ही वस्तु घड़ लिया करता है। जैसे कि किसी संस्कार में मनुष्य की छाया देख ली, वहाँ से झट चल कर दूसरे संस्कार में पक्षी के पंख देख लिये, पक्षी के पंखों का मनुष्य के साथ सम्बन्ध जोड़ दिया। और कल्पनाचार्य तो यह है ही, मनुष्य के उड़ने की, संस्कार के ही बल से कल्पना कर डाली, और इसके ठीक बाद ही लगा उड़ते हुए मनुष्य देखने। और मन में आया तो अभी आप भी उड़ना आरम्भ कर दिया।

वैशेषिक भाष्यकार प्रशस्तपादाचार्य के कथन के अनुसार स्वप्न में उड़ने के दृश्य मनुष्य तब ही देखा करता है, जब उसके शरीर में वायु की प्रधानता हो। पित्त के प्रधान होने पर अग्नि में चलने अथवा बड़े-बड़े अग्नि-काण्डों के और कफ के प्रधान होने पर जल पर तैरने या डूबने के स्पप्न दिखाई दिया करते हैं। कारण यह है कि जो तत्त्व शरीर में प्रधान होता है मन में भी वह प्रधान होगा, और इसीलिए उसके प्रभाव का स्वप्न पर असर पड़ना आवश्यक है।

कई स्वप्नों की सृष्टि वे कर्म-फल-भोग के आधार पर भी मानते हैं। ऐसे स्वप्न आया करते हैं जिससे हमें सुख-दुःख हुआ करता है। इसलिए ऐसे स्वप्न कर्म-फल-भोग भुगाने के लिए हमारे सामने आया करते हैं। परन्तु बहु-संख्यक स्वप्नों की सृष्टि चित्त पर पड़े हुए विषयों और भावनाओं के संस्कारों पर ही निर्भर है।

यह प्रश्न हो सकता है कि कभी-कभी हम स्वपन में भी ऐसा पेड़ भी देखा करते हैं जिस पर मोती फल लगे हुए होते हैं। परन्तु ऐसा पेड़ तो भूमण्डल पर है नहीं, यह स्वप्न आया कैसे? इसका उत्तर हम दे आये हैं। ऐसे स्वप्न मन में शेष रही हुई रजोगुण की चंचलता के परिणाम हैं। हमने वृक्ष को देखा हुआ है और उसका संस्कार चित्त में है। मोतियों को भी देखा हुआ है और उसका संस्कार भी चित्त में है। विक्षिप्त मन ने एक-एक करके इन दोनों संस्कारों को देख लिया, विचित्र दृश्य देखने की भावना से दोनों का संयोग कर दिया और मोतियों वाले वृक्ष की सृष्टि कर डाली। कभी-कभी स्वप्न में ऐसे दृश्य भी सामने आ जाते हैं जिनका कोई भी अंग न देखा हो। ऐसे दृश्यों को विवश हमें चित्त पर पड़े हुए किसी और जन्म के संस्कार कहना ही पड़ेगा।

इस प्रकार हमने स्वप्न और उसके विषयों का संक्षिप्त सा वर्णन अपने विद्यार्थियों के सुभीते के लिए कर दिया है। अब हम यह बतलाने का यत्न करेंगे कि वेद के उपदेश के अनुसार स्वप्न के विषयों पर दैवमन के योग अथवा अवध ाान का प्रयोग किस प्रकार कर सकते हैं, और उससे लाभ उठा सकते हैं।

स्वप्नों से हानियाँ

वस्तुतः अवस्थाएँ तो दो ही होनी चाहियें, जागृत और सुषुप्ति। जागृत कार्य करने के लिए और सुषुप्ति कार्य से

सुषुप्ति लाने के लिये इतना अभ्यास कुछ काल करने के बाद हमारे विद्यार्थी देखेंगे कि वे स्वप्न अवस्था से शनैः शनैः छुटकारा पा रहे हैं।

थके हुए अंगों को विश्राम देने के लिए। यह तीसरी अवस्था बीच में कहाँ से आ कूदी जिसका प्रत्यक्ष लाभ कोई भी दिखाई नहीं देता। और यदि हम जागृत अवस्था के अनन्तर तत्काल ही मन के विक्षेप को बन्द कर सकें तो उसी समय सुषुप्ति के आ जाने से इस अवस्था का अभाव करने में भी समर्थ हो जायेंगे। सुषुप्ति से प्रथम अवधान के द्वारा मन में इस प्रकार की शक्ति का उत्पन्न कर देना युक्ति-युक्त भी है।

कोई-कोई मनुष्य ऐसे देखे गए हैं जिन्हें स्वप्न नहीं आता और जागृत से सीधे सुषुप्ति में चले जाते हैं। सम्भवतः उनके मन से रजोगुण की चंचलता स्वभाव से लुप्त हो गई होगी, परन्तु इच्छा से मन में इस शक्ति का उत्पन्न करना साधारण बात नहीं! यदि विद्यार्थी ऐसा कर सकें तो उन्हें बड़े लाभ की सम्भावना है। मन में, स्वप्न में चंचलता स्थिर रहना विक्षेप के पाठ याद करना है और मन का विक्षेप ही विद्यार्थी की ज्ञान प्राप्ति के मार्ग में एक प्रतिबन्ध है। सुषुप्ति का बहुत सा समय यह विक्षेप ले जाता है और अंगों की थकावट पूरी दूर न होने से शारीरिक शक्ति का क्रम से ह्रास होने लग जाता है। अतः स्वप्न की अवस्था का सर्वथा अन्त भी न किया जा सके, फिर भी उसमें जितनी कमी हो सके विद्यार्थी को उतना ही लाभ है।

स्वप्नों का अन्त कैसे हो?

इस कार्य की सिद्धि के लिए उपाय-

१- विद्यार्थी को अपने सोने के ६ घण्टे नियत कर लेने चाहियें और नियत समय से एक भी मिनट पहले या बाद न सोना चाहिये और न जागना चाहिये। ऐसा करने से नियत समय पर नींद आ जाया करेगी और नियत समय पर आँखें खुल जाया करेंगी। यदि आँखें जल्दी खुल जाती हैं तो सोने का समय उतना ही कम कर देना चाहिये। बहुधा स्वप्न तब आया करते हैं जब हम नींद आये बिना सो जाया करेंगे। जब हम नींद आये बिना सो जाया करते हैं और जागने पर भी आलस्य से खाट पर पड़े रहा करते हैं।

२- सोने से पहले अपनी इच्छा शक्ति से अपने दैवमन पर ऐसा प्रभाव डालना चाहिये कि वह यह सोचता हुआ कि आज स्वप्न का विरोध करेंगे, गहरे अवधान में पहुँच जावे। यद्यपि हम सो जावेंगे परन्तु अवधान से सज्जित हुआ हमारा दैवमन सोते समय भी हमारी स्वप्न अवस्था के मार्ग में रोड़े अटका रहा होगा।

३-सोने से पहिले आत्मा को, सोने की प्रबल इच्छा को, बार-बार जगाना चाहिये, जिससे कि उसे पूरा बल मिले और दैवमन पर उसके प्रभाव की छाप गहरी पड़े।

४-हमारा कार्य करने और बैठने का स्थान सोने के स्थान से पृथक हो, और ठीक सोने के समय ही हम वस्त्र निकाल कर और सन्नद्ध होकर सोने के स्थान पर आवें।

५- सोने के समय हमारे हाथ में कोई पढ़ने की चीज न होनी चाहिये, कोई बात करने वाला हमारे पास न होना चाहिये और दीपक शान्त कर देना चाहिये।

६-खाट पर लेटते ही हमें अंग शिथिल कर देने चाहियें, विचारधारा तथा संकल्प सर्वथा बन्द कर देने चाहियें, और अपनी सब चेतन अचेतन सत्ताओं को गहरे अन्धकार में लीन कर देना चाहिये। सुषुप्ति लाने के लिये इतना अभ्यास कुछ काल करने के बाद हमारे विद्यार्थी देखेंगे कि वे स्वप्न अवस्था से शनैः शनैः छुटकारा पा रहे हैं।

स्वप्न अवस्था में मन काम करता है, यहाँ उसकी क्रियाओं के नियंत्रण में अवधान का प्रयोग उपयोगी है, परन्तु सुषुप्ति अवस्था में तो इसका काम भी बन्द हो जाता है, वहाँ दैव मन का उदय अथवा व्यवधान किस प्रकार काम करेगा।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि सुषुप्ति अवस्था में मन विश्राम करता है और जहाँ तक स्वयं करने का सम्बन्ध है इसका काम बन्द हो जाता है, परन्तु विश्राम करते समय यह अपने कार्य का उत्तरदायित्व अपने साथी धृतिमन के ऊपर छोड़ जाता है। धृतिमन क्या है, इसका व्याख्यान हम इसके प्रकरण में ही करेंगे। यहाँ विद्यार्थी केवल हमारे कथन से इतना मान लें कि यह मन की एक ऐसी अवस्था है, जो सुषुप्त अथवा चेतन के रूप में है। धृतिमन सदा कार्य करता रहता है, इसका कार्य कभी बन्द नहीं होता। सुषुप्ति में प्राण का संचालन करना, जिसके द्वारा जठराग्नि आदि शरीर के अंगों की क्रियायें होती हैं, इसी मन का काम है। जब हम प्रणिधान करके सोया करते हैं कि चार बजे उठेंगे, और ठीक चार बजे ही आँखें खुल जाया करती हैं, तो हमारा मन यद्यपि विश्राम में चला गया था, परन्तु दैव मन के व्यवधान का काम, धृतिमन को सौंपे हुए उसके प्रकाश के द्वारा सुषुप्ति में भी हो रहा था। उसी का यह फल है कि किसी के जगाये बिना ही हमारी आँखें ठीक चार बजे खुल जाया करती है। विद्यार्थियों को यदि धृतिमन से काम करने का अभ्यास हो जावे तो उनके अनेक बड़े-से-बड़े कार्य बिना कठिनाई के सिद्ध हो सकते हैं। मन का यह भाग बड़ा शक्तिशाली है। और सुषुप्ति में प्रणिधान के द्वारा दैव मन ने धृति मन में उद्‌बोध की क्रिया का एक प्रकार से आरम्भ कर दिया है।

पण्डित चमूपति जी की अूमल्य कृति
'संध्या-रहस्य' का धारावाह प्रकाशन

बहुरूपी संध्या

एक बात अवश्य ध्यान में रहे कि संध्या मुख्य है और नियम गौण। यद्यपि संध्या को नियमों से पृथक् नहीं कर सकते, परन्तु तो भी किसी विशेष अवस्था में, उदाहरणतया रोग के समय किसी किसी नियम का उल्लंघन किया जा सकता है।

यात्री घर से चला। घर से चार मील की दूरी पर स्टेशन था। रास्ते में हरे भरे खेत आए। पास एक राजवाहा था। पथिक थक गया था। उसने चाहा– दो घूंट पानी पी लूँ। वाहे के निकट गया तो क्या देखता है कि एक महाशय आंखें मूंदे, पलत्थी लगाए, गर्दन को कील की तरह सीधा किए, विचार में मस्त है मानो कोई महात्मा योग साधन करते हैं। पथिक ने चाहा एक बार माथा टेक दूँ, पर न भगवां वेश था और न राख भभूति ही मली थी। इसलिए रुक गया। फिर भी मन ही मन संशय रहा।

पानी पिया। स्टेशन पर आया। गाड़ी के आने में देर थी। वह यात्रियों का दृश्य देखने लगा। खेत वाला महात्मा विस्मृत सा हो गया। स्टेशन के चौंतरे पर रेल की पटरी के पास ही एक जेन्टलमैन कोट पतलून डाटे, छड़ी घुमाते, बूट के शब्द से ईंटों पर कड़ कड़ करते चल रहे हैं। साथ साथ कुछ बुड़बुड़ाते भी हैं। विचार आया 'जपजी' होगा। समीप गया तो वे शब्द न थे। ओ३म् से आरम्भ कर कुछ वाक्य कहे जाते थे। यही ओम शब्द खेत वाले महात्मा भी बोल रहे थे। सो फिर उनका स्मरण आया। पूछने की उत्कण्ठा हुई, पर साहस न पड़ा।

गाड़ी में बैठे तो किसी बाबू साहब ने बूट खोला और खाना खाने से पूर्व उसी स्थिति में बैठ गया जिस में खेत वाले महात्मा बैठे थे। कुछ देर तक अन्तर्ध्यान रहकर उस महानुभाव ने खाना खाया।

दूसरे दिन नगर में उतरे। विचित्र समारोह था। इधर झण्डियाँ, उधर झण्डियाँ। गाडियों पर भजनीक मनोहर स्वरों से वायु मण्डल को गुंजायमान कर रहे थे। भीड़ इतनी थी कि ठहरने को ठिकाना न था। सायं समय था। भजनीकों ने मधुर वाणी से वही 'ओ३म्' की रट छेड़ी, और वही वाक्य गरज गरज कर गाने लगे, जो स्टेशन के जेण्टलमैन बुड़बुड़ा रहे थे।

दूसरे दिन समाज का वार्षिकोत्सव था। भजन तथा उपदेश होते रहे। वही समय आया और ओम् की रट छिड़ी। यहाँ सब इकट्ठे बोल रहे थे।

हमारे पथिक को ज्ञात हो चुका था यह सन्ध्या थी। इसका अभिप्रायः भी जान चुका था कि परमात्मा का स्मरण है। शंका थी तो यह कि इसके इतने विविध रूप क्यों हैं? क्या इस क्रिया के कोई नियम नहीं हैं? स्थान विषयक, आसन विषयक, स्वर विषयक?

प्रिय पथिक! आ तुझे संध्या के नियम बताऊँ। सम्यक्तया महात्मा ही सन्ध्या कर रहे थे। दूसरे सब उस आदर्श को पहुंचने के अधूरे यत्न हैं। विविध मनुष्यों की विविध क्रियाएँ उनकी भिन्न भिन्न अवस्थाओं की द्योतक हैं। इस पर उदाहरण ले।

कभी स्कूल गया है? और ध्यानपूर्वक वहाँ की क्रिया देखी है? छोटी श्रेणियाँ कोलाहल करती हैं। अनजान अध्यापक डण्डे से कोलाहल बन्द करता है। वे पढ़ते नहीं, चुप करा दो, उन्हें याद ही कुछ नहीं होगा। बड़ी श्रेणियों में जाओ। वहाँ ऊँचा बोलना पाप है। छोटे मिल मिल कर पढ़ते हैं, बड़े एकान्त चाहते हैं। इस विचित्र क्रम को समझा? बच्चे का मन समाहित नहीं। उसकी वृत्ति बाहर की ओर है। इसका अवरोध उसके शक्ति विकास की मृत्यु है। ज्यों ज्यों आयु बढ़ी, सोचने का अभ्यास होता गया। अब चित्त का मुख अन्दर को हो गया। इसीलिए तो हठ है कि रहने को अकेला कमरा चाहिए। परीक्षा की तैयारी स्कूल के आश्रम में नहीं हो सकती। बाग को निकल जाते हैं और वहाँ एकाकी बैठकर पुस्तक से लव लगाते हैं, यहाँ तक कि अपना शब्द भी अरोचक सा हो जाता है।

यही नियम उपासना का है। साधारण जन बालक हैं। उनका मनोविकास नहीं हुआ। वे यदि एकान्त में संध्या करेंगे तो संकल्प विकल्प से व्याकुल होंगे। ये संध्या मन्दिर बनाएँ और उच्च स्वर से मन्त्रों का उच्चारण करें। पर यह आदर्श दृष्टिगोचर रहे कि प्रकृति से मन को हटाकर उसे हृदय में जहाँ परमात्मा और आत्मा का समागम है, स्थित कर सच्चा प्रयाग तीर्थ बनाना है।

समाजों ने मन्दिर बनाए तो हैं पर बहुत कम। एक नगर में एक मन्दिर पर्याप्त नहीं। बृहन्मन्दिर साप्ताहिक

अधिवेशनों के काम आ सकता है। नित्य कर्मों के लिए गली गली में संध्यालय चाहिएँ।

निर्धन भारतीयों में इतनी शक्ति कहाँ कि अपने अपने गृहों में संध्यालय का उत्तम प्रबंध कर सकें? न इतनी कर्मपरायणता है कि प्रातः सायं वन को निकल जाएँ। जो कर सकते हैं उनके लिए मनाही नहीं। धनी लोग अपने घर में संध्यालय बना लें। साधारण जन मन्दिर में ही संध्या कर लें तो ठीक है।

आर्यसमाजों में हमने सन्ध्या की, और की जाती सुनी और देखी है। उच्चारणों का वैविध्य, क्रिया की भिन्नता और बहुधा अभाव, आसन में असावधानता, शुचि अशुचि से उपेक्षा- ये सब बातें किसी अद्‌भुतालय का दृश्य दिखाती हैं। मानो इन लोगों का पन्थ एक नहीं। आर्यसमाज की भिन्न शाखाएँ होंगीं, एक समाज नहीं-ऐसा प्रतीत होता है। उक्त भेदों का विस्तार यहाँ तक हुआ है कि यदि संध्या संबंधी पुस्तकों को ही पढ़ा जाए तो भिन्न सम्प्रदायों की पद्धतियाँ प्रतीत होती हैं। पौराणिक भाई बताते हैं कि उनकी संध्याओं की संख्या १०० से ऊपर है। आर्य भाई इस पर हास्य करते हैं। परन्तु अपनी झोली में भी दृष्टि डाली है? कहीं हम उसी फूट की तैयारी तो नहीं करते। प्रायः आर्य भाई संध्या का आरम्भ आचमन मंत्र 'शन्नो देवी' इत्यादि से करते हैं, जबकि स्वामी जी की स्पष्ट आज्ञा है कि पहले गायत्री से शिखा बंधन करो। आचमन कोई करता ही नहीं, जबकि स्वामी का आदेश है कि यह क्रिया तीन स्थानों पर तीन तीन बार की जाए। (पंच महायज्ञ विधि)इन भेदों का प्रतिकार क्या है? यही संध्यालय। जहाँ मिलकर संध्या करने से ठीक रीति का प्रतिपादन और अनुकरण हो सके। साधारण जनता में देखा देखी का भाव बहुत होता है। जो काम मनुष्य अकेला संकोच सहित करता है, वह मिलकर निःसंकोच तथा निरालस्य किया जाता है। संध्यालय खुलने से संध्या का प्रचार होगा। और प्रायः आर्य कर्त्तव्यपरायण हो जाएँगे। सामाजिक लज्जा से बहुत कुछ इस उद्‌देश्य की सिद्धि में काम लिया जा सकता है।

संध्या का समय दिन और रात की संधि है, जो लोहे की नहीं, चांदी की नहीं, किन्तु आकाश की घड़ी पर उषा रूपी भड़कीले अक्षरों में अंकित देखा जा सकता है।

संध्या का आसन पलत्थी है और छाती, गरदन और सिर को एक सीध में रखना। यही आसन शरीर के लिए लाभकारी है और इसी में ध्यान ठीक लगता है।

शुद्धि का नियम यह है कि प्रातः तो स्नान करलें, और सायं मुंह हाथ पांव धो लें। स्नान कर सकें तो और भी अच्छा। स्थान अत्यंत उज्ज्वल और रमणीक हो। इस विषय में जितनी सावधानी करो श्रेष्ठ है। कड़ी सीमा क्या बांधें!

एक बात अवश्य ध्यान में रहे कि संध्या मुख्य है और नियम गौण। यद्यपि संध्या को नियमों से पृथक् नहीं कर सकते, परन्तु तो भी किसी विशेष अवस्था में, उदाहरणतया रोग के समय किसी किसी नियम का उल्लंघन किया जा सकता है। पर उल्लंघन का कारण अनिवार्य हो तब। यथाशक्ति यत्न करना चाहिए कि कोई भी नियम न टूटे।

जैण्टलमैनी संध्या से संध्या न करना अच्छा है। यही न, परमात्मा का ध्यान न करोगे। कोई डर नहीं। पुण्य के बदले पाप न करो।

संध्या टीका

आगे संध्या के मंत्र आएँगे। उनकी व्याख्या की जाएगी। तत्संबंधी क्रियाओं का विधान होगा। हमने अपने अनुभवों का कुछ अंश पाठकों की भेंट किया है। इससे अधिक भाषा में शक्ति नहीं।

जैसे हम अपने आपको अभी उपासना समुद्र के तट पर ही खड़ा समझकर आनन्द उठाते हैं, इसी प्रकार प्रिय पाठकों को भी प्रेरणा करते हैं कि इन पृष्ठों को उस समुद्र की बिन्दु मात्र ही समझें, और अपने अनुभव द्वारा इसे विस्तृत करते हुए वेदामृत में डुबकी लगाएँ। ऋषि वेदमंत्रों के अर्थ योग द्वारा अवगत करते हैं। यही इस अपूर्व वाणी के पढ़ने और उसको जीवन में डालने का एक मात्र प्रकार है। हम पूर्ण योगी न सही, परन्तु जितना संभव है, हमें मन को एकाग्र कर, ऋषिकृत भाष्य का आश्रय ले, ऋषियों के ही मार्ग का अवलम्बन करना चाहिए।

यदि उपासक ऐसा करे तो पूर्ण सफलता प्राप्त करे। संध्या विधि का क्रम निम्नलिखित है। इसी क्रम से मंत्रों की व्याख्या और क्रिया का विधान किया गया है।

(१) गुरुमन्त्र द्वारा शिखा-बंधन
(२) आचमन
(३) इन्द्रिय-स्पर्श
(४) मार्जन
(५) प्राणायाम
(६) अघमर्षण के तीन मंत्र
(७) पुनराचमन
(८) मनसा परिक्रमा के ६ मंत्र
(९) उपस्थान के चार मंत्र
(१०) पुनराचमन
(११) पुनः गुरुमंत्र
(१२) नमस्कार

इस क्रम में भी एक रहस्य है जो व्याख्या पढ़ने से स्वयं विदित हो जाएगा।

विश्व की सर्वप्रथम चिकित्सा पद्धति पर एक गंभीर शोधपूर्ण आलेख

विश्व की प्रथम चिकित्सा पद्धति : आयुर्वेद

❐ 'आयुर्वेद शिरोमणि' डॉ० मनोहरदास अग्रावत
एन० डी०, विद्यावाचस्यति (प्राकृतिक चिकित्सक)

चिकित्सा विज्ञान की शिक्षा एवं दीक्षा के लिए भारत के ऋषियों ने एक स्वतंत्र प्रणाली की स्थापना की थी, जिसके आधार पर राजप्रश्रय न पाकर भी भारतीय चिकित्सा-पद्धति 'आयुर्वैदिक चिकित्सा' भारतीय संस्कृति में एक अंगभूत होकर, आज तक जीवित है।

प्राचीनकाल में आयुर्वेद ही चिकित्सा विज्ञान के रूप में विद्यमान था-ऐसा निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है। सामान्य शिक्षा के साथ तत्कालीन गुरुकलों एवं विद्यापीठों में तकनीकी एवं चिकित्सा विज्ञान की शिक्षा का समुचित प्रबन्ध था।

आयुर्वेद ऋग्वेद अथवा अथर्ववेद का उपवेद या उपांग होने के कारण उतना ही प्राचीन है जितनी सृष्टि। प्राणी इस धरा पर अवतरित होते ही दुःख या व्याधि से पीड़ित हो रहता है। प्रकृति में उसकी चिकित्सा के लिए पहले से भेषज्य भण्डार भर दिया गया है। पशुओं में इस स्वाभाविक प्रवृत्ति का पर्यवेक्षण किया जा सकता है।

आयुर्वेद आठ अंगों में विभक्त है-

(१) काय चिकित्सा (इन्टरनल मेडिसिन)
(२) शल्य शास्त्र (जनरल सर्जरी)
(३) शालाक्य शास्त्र (नेत्रविज्ञान सहित ऊर्ध्वांग चिकित्सा)
(४) कौमार भृत्य (बालरोग चिकित्सा, प्रसूति विद्या सहित)
(५) विषतंत्र (आधुनिक टाक्सिकालोजी एवं न्याय वैद्यक)
(६) भूत विद्या (आधुनिक साइकिमाट्री एवं जीवाणु विज्ञान)
(७) रसायन तंत्र (वृद्धावस्था को रोकने वाला तथा शरीर को युवा रखने वाला)
(८) बाजीकरण (शरीर को सुपुष्ट बनाकर मैथुन शक्ति बढ़ाने वाला)।

प्राचीन भारत में इन आठ अंगों की शिक्षा-दीक्षा की पूरी व्यवस्था थी तथा इन सब पर स्वतंत्र ग्रन्थ थे। इनमें आदि के चार अंगों को छोड़कर शेष सभी पर प्राप्त तन्त्र इस समय लुप्त हैं, केवल इनके उद्धरण चरक सुश्रुत, अष्टांग-हृदय, अष्टांग-संग्रह एवं माधव निदान के टीकाकारों की टीका में मिलते हैं।

छान्दोग्य उपनिषद् (७/१) में अध्याप्य विषयों की एक सूची दी गई है। इसमें चारों वेदों के साथ इतिहास-पुराण, व्याकरण, प्राणीशास्त्र (भूतविद्या), गणित शास्त्र (राशि), अध्यात्म शास्त्र (देव), भूगर्भशास्त्र (निधि), वाद विद्या (वाको वाक्यम्), राजनीति (एकायन), धर्मशास्त्र (देव विद्या), निर्वचन शास्त्र (निरुक्त), ब्रह्मविद्या इन्द्रजाल (पित्र्य), सैन्य विज्ञान (क्षत्र विद्या), खगोल (नक्षत्र विद्या), विष विद्या (सर्प विद्या) स्थापत्य एवं ललित कला (देवजनविद्या) का समावेश है। रंग रामानुज ने देव विद्या एवं जन विद्या को पृथक्-पृथक् मान कर, देव विद्या का अर्थ गान्धर्व शास्त्र या संगीत शास्त्र तथा जन विद्या का अर्थ आयुर्वेद या चिकित्सा विज्ञान किया है।

पाणिनि ने दो सूत्रों (४/२/६० एवं ४/४/१०२) के गणपाठ में आयुर्वेद की गणना की है। महाभारत में आयुर्वेद (सभापर्व ११/१५) के साथ इसके आठों अंगों (सभा-५/६१) में निपुण चिकित्सकों का निर्देश है।

विश्वविद्यालय में चिकित्सा विज्ञान के संकाय की सत्ता का सर्वप्रथम निदर्शन हमें तक्षशिला विश्वविद्यालय से मिलता है। इस विश्वविद्यालय की स्थापना ८०० ई० पूर्व के लगभग हुई थी। इससे भी पूर्व चिकित्सा विज्ञान की शिक्षा के और भी केन्द्र थे, जिनमें से काशी शल्य चिकित्सा के लिए और मिथिला (दरभंगा के आस पास का प्रदेश) शालक्य विद्या के लिए अत्यन्त प्रसिद्ध थे। काशी राज दिवोदास धन्वन्तरि काशी के राज्याधिप के साथ-साथ एक कुशल शल्यवेत्ता थे, जिन्होंने सुश्रुत वैतरण भोज आदि अनेक शिष्यों को शल्य प्रमुख आयुर्वेद को पढ़ाया। मिथिलाधिप निमि ने शालाक्य शास्त्र का प्रवर्तन किया और उनके पास नेत्र, कर्ण, नासिका तथा मुख के रोगों की चिकित्सा एवं शल्य कर्म सीखने के लिए भारत के सभी भागों से छात्र उपस्थित होते थे। दिवोदास को एक बार हैहय राजाओं से पराजित होकर उत्तर काशी में स्थित अपने गुरु भारद्वाज के आश्रम की शरण लेनी पड़ी थी और उस काल में सुश्रुत

आदि छात्र भी उनके साथ थे। इससे पूर्व संहिता काल में पुनर्वसु आत्रेय का गुरुकुल था जहाँ काय चिकित्सा प्रधान चिकित्सा विज्ञान की शिक्षा दी जाती थी। आत्रेय के अग्निवेश भेल आदि प्रमुख शिष्य थे जिन्होंने अपने गुरुओं के उपदेशों को अपने नाम के तन्त्रों में निबद्ध किया। इनमे से अग्निवेश एवं भेल की संहिताएं आज भी किसी न किसी रूप में उपलब्ध हैं। अग्निवेश की संहिता ही कालान्तर में चरक द्वारा संस्कृत में चरक संहिता कहलाई और चतुर्थ शताब्दी में काश्मीरी चिकित्सक दृढ़बल ने पुनः इसका उपबृंहण किया। आत्रेय यायावर प्रकृति के व्यक्ति थे। वे अपने शिष्य को लेकर गान्धार (अफगानिस्तान) चैत्ररथ वन (चित्राल-पश्चिमी पाकिस्तान) कश्मीर, कैलाश एवं काम्पिल्य (उत्तर प्रदेशान्तर्गत फर्रुखाबाद का कपिला स्थान) जैसे स्थानों पर जाया करते थे और भेषज्य तथा रोग विज्ञान की शिक्षा दिया करते थे।

कौमार भृत्य के उपदेशक महर्षि काश्यप का आश्रम या गुरुकुल हरिद्वार के निकट कनखल में था। यहीं पर वृद्ध जीवक ने बाल रोग चिकित्सा पढ़ी। यह वृद्ध जीवक बौद्ध चिकित्सक जीवक से सर्वथा भिन्न है। काश्यप-संहिता का प्रणयन इसी ने किया जो कालान्तर में वात्स्य द्वारा प्रति-संस्कृत हुई। अतः यह कहा जा सकता है कि २००० ई० पूर्व तक चिकित्सा विज्ञान के स्थिर केन्द्रों में काशी, मिथिला, हरिद्वार व तक्षशिला प्रमुख थे।

तक्षशिला के चिकित्सा पीठ की ख्याति उसके जाज्वल्यमान छात्र जीवक पर ही आधारित है। बौद्ध वाङ्मय के अन्तर्गत विनय पिटक में (८/१,१५,१६) में जीवक की चिकित्सा कुशलता एवं शल्यकर्म प्रवीणता का परिचय मिलता है। तक्षशिला के बाद नालन्दा विश्वविद्यालय में भी आयुर्वेद एक प्रमुख अध्याप्य विषय था। प्रसिद्ध रसासन-शास्त्री नागार्जुन वहीं के प्रोफेसर थे, जो पारद से स्वर्ण बनाया करते थे। वह विश्वविद्यालय चौथी शताब्दी से दसवीं शताब्दी तक विद्यमान रहा। उसके अनन्तर यवनों के पदार्पण से यूनानी चिकित्सा का बोलबाला रहा। चिकित्सा विज्ञान की शिक्षा अब तक चिकित्सकों के चिकित्सालयों में होती रही।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी द्वारा भारत पर प्रभुत्व कर लेने पर कलकत्ता स्थित आयुर्वेद महाविद्यालय मेडीकल कॉलेज के रूप में परिणत कर दिया गया और ब्रिटिश मेडीकल स्कूल के आधार पर चिकित्सा विज्ञान की शिक्षा आरम्भ हुई।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि चिकित्सा विज्ञान की शिक्षा एवं दीक्षा के लिए भारत के ऋषियों ने एक स्वतंत्र प्रणाली की स्थापना की थी, जिसके आधार पर राजप्रश्रय न पाकर भी भारतीय चिकित्सा-पद्धति 'आयुर्वैदिक चिकित्सा' भारतीय संस्कृति में एक अंगभूत होकर, आजतक जीवित है।

मनोहर आश्रम, स्थान-उम्मैदपुरा,
पो० तारापुर (जावद)-४५८३३०, जिला नीमच म०प्र०
चलभाष ०८९८९७४२०४७

शिक्षा पद्धति का आधार

------शांतिप्रवाह का शेष

प्रमदितव्यम्। कुशलान्न प्रमदितव्यम्। स्वाध्यायप्रवचनाभ्याम् न प्रमदितव्यम्। मातृदेवोभव। पितृदेवोभव। आचार्य देवोभव। अतिथि देवोभव-'' आदि-आदि।

आज शिक्षा की विडम्बना यह है कि बालकों को जो चीजें नहीं सिखाई जा रही, उन्हें सीखने की उससे आशा की जा रही है। आज शिक्षा का मतलब कुछ जानकारियां प्राप्त करना है-वह भी नहीं-परीक्षा में उत्तर पुस्तिका पर कुछ लिख देना भर है। उस शिक्षा का अर्थ ही क्या है जिसमें नैतिक शिक्षा के रूप में एक अलग से विषय शुरु करने की आवश्यकता पड़े। मनुष्यों के तीनों शिक्षक स्वयं किंकर्त्तव्यविमूढ़ हैं। न कोई योजना है न कोई उद्देश्य। माता-पिता का एक वर्ग तो वह है जो उनकी रोटी की चिन्ता में चौबीस घंटे खटता रहता है। दूसरे वर्ग का दृष्टिकोण यह है कि बच्चों को क्या धार्मिक शिक्षा देकर भूखे मारना है। अगर राष्ट्र का निर्माण करना है तो देश के कर्णधारों को इन विकट परिस्थितियों को समझकर गम्भीर विचारपूर्वक उपाय करना ही होगा। माता-पिता भी अपने कर्त्तव्यों से बच नहीं सकते। इस बात की अभिव्यक्ति ऋषि दयानन्द जी महाराज के इन शब्दों से अधिक मार्मिक नहीं हो सकती-''वह कुल धन्य। वह सन्तान बड़ा भाग्यवान्। जिसके माता और पिता धार्मिक विद्वान हों। जितना माता से सन्तानों को उपदेश और उपकार पहुँचता है, उतना किसी से नहीं।''

विडम्बना की बात है कि आज तक हमारी सरकारें यही नहीं समझ सकी हैं कि भाषा ज्ञानार्जन का माध्यम है या साध्य! तभी वह सभी जगह विदेशी भाषा को थोंपने का प्रयास करती रहती है। शिक्षा पद्धति के आधार की ओर उसका ध्यान ही नहीं है।

जानते हो?

प्रतीक सोनी

सबसे ऊँचा बांध : टिहरी बांध, यह भागीरथी नदी पर 261 मीटर की ऊँचाई पर बना है।
सबसे लम्बा बांध : हीराकुण्ड बांध, उड़ीसा, महानदी
सबसे बड़ी फलों की मण्डी : आजादपुर, दिल्ली
सबसे बड़ा ग्लेशियर : सियाचिन, भारत पाक सीमा पर, 75.6 कि० मी० चौड़ा।
सबसे बड़ी झील : वूल्हर झील, कश्मीर
सबसे बड़ी गुफा : अमरनाथ
सबसे लम्बां नदी का पुल : महात्मा गांधी सेतु, पटना में गंगा पर, यह 5570 मीटर लम्बा है।
सबसे अधिक चौड़ा पुल : दिल्ली में यमुना पर, यह 552 मीटर चौड़ा है।

हास्यम्

–आस्था गुड्डू

❖ रात के वक्त एक पुलिसवाला रास्ते से गुजर रहा था। उसने सुना– कोई बचाओ, बचाओ चिल्ला रहा है। वह फौरन वहाँ पहुँच गया। देखा– कोई आदमी कुएँ में गिरा है। फौरन रस्सी डालकर खींचने लगा। जब वह कुछ ऊपर आया तो वह एस पी साहब थे। पुलिस वाले ने शिष्टाचार के नाते तुरन्त रस्सी छोड़कर सैल्यूट मारा, गुड नाइट सर।

❖ राम– पहले मच्छर रात को काटते थे, लेकिन अब दिन में भी काटते हैं।
श्यामः हाँ भाई, महँगाई बढ़ गई है, इसलिए उन बेचारों को दिन–रात काम करना पड़ता है।

❖ जज– तुमने कुछ दिन पहले भी सौ रुपये चुराए थे?
चोर– साहब, महंगाई के जमाने में १०० रुपये कितने दिन चलते हैं?

❖ हरसी– लंबी सांस लो और बोलो– पांच, पांच, पांच।
अनु– ज्यादा लंबी सांस लेकर– --- पन्द्रह!

❖ आगरा में– एक यात्री– रिक्शे वाले से– भाई ताज महल का क्या लोगे?
रिक्शावाला– क्षमा कीजिये, मैं ताजमहल नहीं बेचता।

❖ थानेदार– जब तुमने चोर को देख लिया था तो उसे पकड़ा क्यों नहीं?
सिपाही– जी, वह ऐसे घर में घुस गया था– जिसके दरवाजे पर लिखा था– अन्दर आना मना है।

❖ ग्राहक– भाई यह चाय इतनी ठण्डी क्यों है?
चायवाला– जी, यह कश्मीर की चाय है।

बाल वाटिका

सम्पादक : सुमेधा

प्रहेलिकाः

❖ सत्य धर्म का बोझा ढ़ोता।
जितना होता उतना कहता।
हाथ के आजू बाजू फैले,
पांव के रहते हैं दो थैले।।

❖ एक जगह पर खड़ा हुआ हूँ।
परहित पथ पर अड़ा हुआ हूँ।।

❖ है स्वभाव से नटखट चंचल,
श्वेत वर्ण का निर्मल कोमल,
धावक चतुर कहलाता हूँ मैं,
बच्चों को अति भाता हूँ मैं।।

❖ एक बहादुर छोटी काया,
बोल बोल दुःख देने आया।।

❖ लकड़ी जल कोयला भई,
कोयला जल भई राख।
मैं अभागिन ऐसी जली,
कोयला हुई न राख।।

तराजू, पेड़, खरगोश, मच्छर, गैस

विचार कणिकाः

–प्रतिभा बहन

❖ जानने का उतना महत्त्व नहीं है-- महत्त्व इस बात का है कि उस जाने हुए का आपके जीवन में कितना प्रभाव है।

❖ आस्तिकवाद का न होना (भगवान को न मानना) जीवन में अकेले पड़े रहने के समान है।

❖ यदि तुम केवल अपने लिए सोचते हो तो दरिद्रता कभी नहीं जाएगी।

❖ सत्संग का अर्थ है– जो नहीं करने वाली बात है वह नहीं करेंगे।

❖ पवित्र गृहों की नींव स्त्री की बुद्धि से रखी जाती है, पुरुष की शक्ति से नहीं। –महादेवी वर्मा

❖ सत्य कल्पवृक्ष है, जिससे मानव की सारी कामनाएँ पूर्ण होती हैं।

❖ जितेन्द्रियता तेजस्विता का मूल है।

❖ जीवन की सफलता कर्म या पुरुषार्थ पर निर्भर है।

मैं और मेरे पिता

प्रस्तुति : प्रवीणकुमार 'स्नेही'

1. जब मैं 3 वर्ष का था, तब सोचता था कि मेरे पिता दुनिया के सबसे मजबूत और ताकतवर व्यक्ति हैं।

2. जब मैं 6 वर्ष का हुआ, तब मैंने महसूस किया कि मेरे पिता दुनिया के सबसे ताकतवर ही नहीं, सबसे समझदार व्यक्ति भी हैं।

3. जब मैं 9 वर्ष का हुआ, तब मैंने महसूस किया कि मेरे पिता को दुनिया की हर चीज के बारे में ज्ञान है।

4. जब मैं 12 वर्ष का हुआ, तब मैंने महसूस किया कि मेरे पिता के मुकाबले मेरे मित्रों के पिता ज्यादा समझदार हैं।

5. जब मैं 15 वर्ष का हुआ, तब मैंने महसूस किया कि मेरे पिता को दुनिया के साथ चलने के लिए कुछ और ज्ञान की जरूरत है।

6. जब मैं 20 वर्ष का हुआ, तब मुझे महसूस हुआ कि मेरे पिता किसी और ही दुनिया के हैं और वे हमारी सोच के साथ नहीं चल सकते।

7. जब मैं 25 वर्ष का हुआ, तब मैंने महसूस किया कि मुझे किसी भी काम के बारे में अपने पिता से सलाह नहीं करनी चाहिए, क्योंकि उन्हें हर काम में कमी निकालने की आदत-सी पड़ गई है।

8. जब मैं 30 वर्ष का हुआ, तब मैंने महसूस किया कि मेरे पिता मुझे देखकर कुछ बदलने लगे हैं।

9. जब मैं 35 वर्ष का हुआ, तब मैं महसूस करने लगा कि उनसे छोटी-मोटी बातों के बारे में सलाह ली जा सकती है।

10. जब मैं 40 वर्ष का हुआ, तब मैंने महसूस किया कि कुछ जरूरी मामलों में भी पिताजी से सलाह ली जा सकती है।

11. जब मैं 50 वर्ष का हुआ, तब मैंने फैसला किया कि मुझे अपने पिता की सलाह के बिना कुछ नहीं करना चाहिए, क्योंकि तब तक मुझे यह ज्ञान हो चुका था कि मेरे पिता दुनिया के सबसे समझदार व्यक्ति हैं।

साभार- अहा जिन्दगी

देश बड़ा है, धर्म बड़ा है,

सुन्दर धरती बने हमारी, हम सबका अरमान है।
देश बड़ा है, धर्म बड़ा है, बड़ा नहीं इंसान है।।
शत-शत वन्दन उन वीरों को, वीरों के विश्वास को।
देश धर्म के लिए जिन्होंने, लिखा नये इतिहास को।।
वीरों की यह धरती हमको लगती स्वर्ग समान है।
देश बड़ा है, धर्म बड़ा है, बड़ा नहीं इंसान है।।
सच्चाई की राह चले जो, कितने कष्ट उठाते हैं।
युगों युगों तक लोग उन्हीं को अपना शीश झुकाते हैं।।
स्वर्ण अक्षरों में लिखा जाता उनका बलिदान है।
देश बड़ा है, धर्म बड़ा है, बड़ा नहीं इन्सान है।।
रोम-रोम में जिनके अन्दर भारत माँ का प्यार है।
जब-जब पड़े जरूरत मरने मिटने को तैयार है।।
दुनिया भर में सब से न्यारा अपना देश महान है।
देश बड़ा है, धर्म बड़ा है, बड़ा नहीं इंसान है।।

❑सहदेव समर्पित

व्यवहार की शिक्षा

एक पढ़े लिखे व्यक्ति नाव से नदी पार कर रहे थे। उन्होंने खेवट से पूछा–'क्या तुम व्याकरण जानते हो?' मल्लाह ने कहा–'नहीं।' बाबू ने कहा–'तुम्हारी चार आने की जिन्दगी बेकार गई।' थोड़ी देर बाद उस व्यक्ति ने फिर कहा–'तुम कविता करना तो जानते होगे?' खेवट ने फिर मना कर दिया। बाबू ने कहा–'फिर तो तुम्हारी आठ आना जिन्दगी बेकार गई।' फिर बाबू ने कहा–'अच्छा, तुम्हें गणित तो आता होगा?' खेवट बोला–'बाबू जी गणित भी मैं नहीं जानता।' इस पर बाबू ने कहा–तब तो तुम्हारी बारह आना जिन्दगी व्यर्थ है।'

संयोग से नदी में तूफान उठ खड़ा हुआ। नाव डगमगाने लगी। खेवट ने बाबू से पूछा–'बाबू जी, क्या आप को तैरना आता है?' बाबू ने कहा–'नहीं', 'तब तो आपकी सोलह आना जिन्दगी बेकार हो गई।' कहकर खेवट नदी में कूद गया।

व्यवहार की शिक्षा के बिना सारी शिक्षा व्यर्थ है।

देश की चिन्ता

जापान में भारत के विख्यात तत्वचिन्तक स्वामी रामतीर्थ रेल–यात्रा कर रहे थे। वे एक रेलवे स्टेशन पर उतरे, प्लेटफार्म पर चक्कर लगा गए, पर उनकी मनचाही चीज नहीं मिली। बहुत परेशान, रेल डिब्बे में अपने स्थान पर आए। मन का असन्तोष चेहेरे पर झलक गया, कुछ परेशान से होकर बड़बड़ाने लगे। साथ बैठे एक जापानी यात्री भारतीय साधु यात्री की परेशानी से चिन्तित हो उठे। वे पूछ ही बैठे–'महोदय क्या बात है, जिससे आप इतने चिन्तित और परेशान है?'

भारतीय साधु ने कहा–'यह कैसा देश है, जहाँ खाने के लिए फल खरीदना चाहो तो मिलते नहीं।'

जापानी मुसाफिर ने कलाई की घड़ी देखी, गाड़ी छूटने में कुछ ही मिनट बचे थे। चलते हुए बोले–'महाशय मैं अभी आता हूँ।'

कुछ ही मिनटों में जापानी मुसाफिर फलों से भरी एक टोकरी ले आए और उसे उन्होंने भारतीय साधु को सौंप दिया।

भारतीय संन्यासी प्रसन्न हो उठे। जेब से बटुआ निकालते हुए बोले–'इन फलों की कितनी कीमत है?

'कुछ नहीं, केवल इतना ही, कभी भविष्य में यह न कहिए कि हमारे देश जापान में फल नहीं मिलते।'

भारतीय संन्यासी निरुत्तर हो गए। उस जापानी यात्री की देश भक्ति ने उनका मुंह बन्द कर दिया था।

बोध–कथाएँ

संकलन : सुमेधा

आप भला तो जग भला

एक राजा था चन्द्रसेन। वह सभा में आने वाले विद्वानों का बहुत आदर सत्कार करता। उन्हें बैठने के लिए उच्चासन देता। उनकी विद्वत्तापूर्ण बातें सुनता। उन्हें पर्याप्त दान दक्षिणा देकर विदा करता। विद्वान् राजा का गुणगान करते अपने मार्ग पर चले जाते।

राजा का अधिकांश समय विद्वानों के बीच ही व्यतीत होता था। एक बार उसके दरबार में दो विद्वान् आए। राजा ने उठकर उनका स्वागत किया। एक विद्वान् तो राजा के स्वागत से बहुत प्रसन्न हुआ। दूसरे ने उपेक्षा से मुंह बना लिया। राजा को बड़ा आश्चर्य हुआ। पर उसने कहा कुछ नहीं। उसने दोनों को उचित आसनों पर बैठा दिया।

दोनों विद्वानों की शक्ल लगभग एक जैसी थी। वेश भूषा में भी कोई अन्तर नहीं था पर व्यवहार में बड़ा अन्तर था। राजा गुणों का पारखी था। वह दोनों से उनके अनुभव पूछने लगा। पता चला कि दोनों सगे भाई हैं।

अपने अनुभव के विषय में एक ने बताया कि वह सारी दुनिया में घूमा है पर एक भी व्यक्ति बुरा न दिखा, सारे लोग भले हैं। जिस विद्वान् ने मुंह बनाया था उसने अपने भाई की बात काटते हुए कहा– अरे भई तुम्हें दुनिया में भले लोग कैसे दिखाई पड़ गए। सब बुरे और बदमाश हैं। सब आपस में लड़ते हैं। एक दूसरे की जड़ काटने पर तुले हैं। मुझे तो एक भी भला आदमी अभी तक नहीं मिला।

अब राजा असमंजस में पड़ गया कि किसकी बात सही माने। अन्त में काफी सोच विचार करने के बाद वह बोला– आप दोनों का ही कहना सच है। वास्तव में दुनिया वैसी ही है, जैसा हमारा दृष्टिकोण है। आप भला तो जग भला। यह सुनते ही दूसरे विद्वान् ने अपना सिर नीचा कर लिया।

हमें दूसरों की अच्छाई ग्रहण करनी चाहिएँ बुराई नहीं।

और अन्त में

मीठे बोल-- वातावरण को मधुर बनाने का सर्वोत्तम साधन हैं। दो मीठे बोल जितना अमृत का संचार कर देते हैं, उतना अन्य कोई ओषधि नहीं कर सकती। दीन, हीन, विपत्ति में पड़े हुए, रोगी व असहाय व्यक्ति को सहानुभूतिपूर्ण मधुर वचन एक नया जीवन प्रदान कर देते हैं।

भजनावली

हो गई हानि वेद बिना

रचयिता : पं० ताराचन्द वैदिक तोप
प्रस्तोता : अशोक कुमार आर्य, बीकानेर गंगायचा, रेवाड़ी

मत-मतान्तर फैल गये हुई खैंचातानी वेद बिना।
धर्म-कर्म को भूल गये यूँ हो गई हानि वेद बिना।।

वेदों को कर लोप यहाँ मनमाने झूठे ग्रन्थ रचे।
एक नहीं दो तीन नहीं कहाँ तक बतलावें अनन्त रचे।
साधु सन्त महन्तों ने फिर अलग-अलग कई पन्थ रचे।
अण्ड-बण्ड-पाखण्ड गपोड़े सारे ही मन घडन्त रचे।
लाखों पशु पक्षियों की यहाँ हुई कुर्बानी वेद बिना।।1

बच्चे और बूढों की यहाँ अनमिलती करके शादी।
मारी-मारी फिरैं बिचारी लाखों विधवा बिठलादी।
स्वाँग सिनेमा दिखा बना दिए छोरे-छोरी अलबादी।
ब्राह्मण तक भी आज देखलो मांस शराब के हैं आदि।
नाच रहे खड़े पहन सभा में तील जनानी वेद बिना।।2

एक ईश्वर को तजकर यहाँ देवता तैंतीस करोड़ पूजैं।
देवी मईयाँ सेढ़ शीतला देखें ठौड़ ही ठौड़ पुजैं।
सैयद जाहर पीर कबर ये तो घने बेजोड़ पुजैं।
नंग धडंगे बाबाजी मस्टन्डे तग्गड़ तोड़ पुजैं।
बान्धै गंडा झाड़ा लावें स्याणा स्याणी वेद बिना।।3

जीवित मात-पिता आदि से लड़ते और फिसाद करैं।
मर जाने के बाद देखते धन कितना बरबाद करैं।
तेहरामी वरनी बरसोधी कनागतों में श्राद्ध करैं।
अछूत बतावैं मनुष्यों को धूर्त्त बने बकवाद करैं।
जात-पात और छुआछात की हुई नादानी वेद बिना।।4

यूँ कह गए दयानन्द ऋषि तुम वेदों का प्रचार करो।
शिखा सूत्र को धारण करना बनो आर्य प्यार करो।
दश नियमों का पालन और घर-घर सोलह संस्कार करो
आपस में मिलने पर सब नमस्ते नर और नार करो।
ताराचंद विचार करो कोई हो ना ज्ञानी वेद बिना।।5

वेदों को पढ़ाना है

रचयिता : सहदेव समर्पित

वेदों को पढ़ाना है- सारी दुनिया को।
संदेश सुनाना है, सारी दुनिया को।।
मनुष्य मात्रा का होवे सुधार, करें सभी आपस में प्यार,
ये बतलाना है, सारी दुनिया को।।

मिल के चलेंगे सारे, संगठन सूक्त का है ये कहना।
नफरत घृणा भुलाके, प्रेम से सब रहें भाई बहना,
मिल के रहें, सत्पथ को गहें,
गर सुख पाना है, सारी दुनिया को।।१।।

हम करें उन्नति इस जगत् में,
पर भुलाएँ ना आध्यात्मिकता।
होवे पवित्र बुद्धि ना हो पापों की फिर ये अधिकता।।
सब नरनारी, हों उपकारी,
ये धर्म बनाना है, सारी दुनिया को।।२।।

रोग सारे कटें ये जगत् के,
पंचयज्ञ हम प्रतिदिन रचाएँ।
'केवलाघो भवति केवलाधी'
दूसरों को खिलाकर के खाएँ।।
सब परिश्रम करें, दीनता सब हरें,
ये समझाना है, सारी दुनिया को।।३।।

धर्म और अर्थ को साध करके
जो भी फिर काम को साध लेंगे।
जो है जीवन का लक्ष्य समर्पित
मोक्ष की राह पर फिर चलेंगे।।
आने जाने से, दु:ख पाने से,
छुटकारा पाना है, सारी दुनिया को।।४।।

स्वामी भीष्म भजनावली
स्वामी भीष्म जी महाराज के चुने हुए भजनों का संग्रह
मूल्य ७० रुपये केवल
प्रकाशक और प्राप्तिस्थान
शिवकुमार आर्य (पौत्र)
भीष्म भवन घरौंडा, जिला करनाल

केंद्रीय कारागार अजमेर में हुए आचार्यश्री आनन्द पुरुषार्थी जी के प्रवचन

23 एवं 24 फरवरी को वैदिक आध्यात्मिक न्यास की गोष्ठी में सम्मिलित होने आये आचार्य श्री आनंद पुरुषार्थी जी ने उसके अगले दिन 25 फरवरी को केंदीय कारागार के बंदी भाईयों को मार्गदर्शन दिया। यहाँ पर लगभग 400 बंदी उपस्थित थे। जेल में रहे श्री रामप्रसाद बिस्मिल, सुभाषचन्द्र बोस, लोकमान्य तिलक, गाँधीजी आदि अनेक महापुरुषों का उदहारण देकर अपनी बात को पुष्ट किया। कई योनियों में भटकने के बाद हमें मानव जीवन प्राप्त हुआ है। आगे का जीवन अभी भी सुधारा जा सकता है। आचार्यश्री ने कुछ साहित्य भी परोपकारिणी सभा की ओर से जेल अधीक्षक श्री शंकरलाल ओझा को पुस्तकालय हेतु भेंट किया। अनेक कैदियों ने दुर्गुणों को छोड़ने का संकल्प लिया। यदि कोई अपने पुत्र पुत्री को गुरुकुल भेज कर विद्वान् बनाना चाहे तो उसकी नि:शुल्क व्यवस्था की जावेगी। अधीक्षक ओझा जी ने प्रसन्नता व्यक्त करते हुए आगे भी ऐसे ही कार्यक्रम आयोजित करने का आग्रह किया। कार्यक्रम की शुरुआत यतीन्द्र शास्त्री जी ने गुरुकुल की स्नातिका बेटी श्वेता के साथ भजन गाकर की। जेल के अनेक सुरक्षाधिकारी, श्री बलेश्वर मुनि जी व ऋषि उद्यान के अनेक महानुभाव उपस्थित थे।

यतीन्द्र शास्त्री

सार्वदेशिक आर्य वीर दल, अजमेर

शोक समाचार

आर्यसमाज नजफगढ़ के संरक्षक महाशय अभयराम आर्य का देहावसानगत २८ जनंवरी को ८८ वर्ष की आयु में हो गया। उनका अन्तिम संस्कार वैदिक मंत्रोच्चार के साथ किया गया। वे अपने पीछे भरा पूरा परिवार छोड़ गए। उन्होंने अपने जीवन काल में आर्यसमाज की बहुत सेवा की। कई वर्ष तक वे आर्यसमाज नजफगढ़ के मंत्री रहे। वे नजफगढ़ के गणमान्य व्यक्तियों में से एक थे। नजफगढ़ आर्यसमाज व क्षेत्र के गणमान्य लोगों ने उन्हें भावभीनी श्रद्धांजली दी।

प्रधान	मंत्री
श्री जगदीश मलिक	डॉ० बी०डी० लाम्बा
०९८६८९९८२९६	०९८७१६९५१८५

शिविर सूचना

हमारा आगामी क्रियात्मक योग प्रशिक्षण शिविर ३१ मार्च से ७ अप्रैल २०१३ तक होने जा रहा है। कृपया शिविर में भाग लेने हेतु इच्छुक महानुभाव २०० रुपये का धनादेश निम्नलिखित पते पर प्रेषित करके आवेदन पत्र तथा नियमावलि मंगवाकर पंजीकरण करवा लेवें। भोजन शुल्क ५०० रुपये शिविर स्थल पर देय होगा। स्थान सीमित हैं और शिविर में पूर्णकालिक मौन रखना होगा। बिना पंजीकरण के प्रवेश देने में हम असमर्थ होंगे।

व्यवस्थापक वानप्रस्थ साधक आश्रम

आर्यवन, रोजड़, पो० सागपुर,

जिला साबरकाठा, गुजरात ३८३३०७

दूरभाष : (०२७७०) २८७४१७, ९४२७० ५९५५०

प्रवेश आरम्भ

गार्गी वैदिक कन्या विद्यालय (गुरुकुल)

कनियान, मुजफ्फरनगर (उ० प्र०)

वैदिक संस्कृति एवं नैतिक वातावरण से ओतप्रोत, सी0 बी0 एस0 सी0 पाठ्यक्रम पर आधारित एक पूर्ण आवासीय कन्या गुरुकुल

प्रथम सत्र २०१३-१४ के लिये कक्षा ४, ५, ६ हेतु प्रवेश आरम्भ है।

सम्पर्क सूत्र

शीशपाल सिंह, प्रबंधक (०९७६०४६१७००)

सुमन आर्या प्रधानाचार्या (०८८९९०४६२१६)

शांतिधर्मी परिसर में

पूर्णिमा महोत्सव

२५ फरवरी, २०१३ सोमवार, सायं ३ बजे से आप सादर आमंत्रित हैं।

निकट शिव धर्मशाला, नरवाना मार्ग, जींद

हमारे कुछ प्रमुख प्रकाशन

१- वीर बालकों की कहानियाँ (सत्यसुधा शास्त्री) सच्ची ऐतिहासिक कहानियाँ ३०/-

२- स्वाभिमान का प्रतीक मेवाड़ (राजेशार्य आट्टा) प्रथम संस्करण १५/-

३- स्वाभिमान का प्रतीक मेवाड़ (राजेशार्य आट्टा) द्वितीय संस्करण २५/

४- योग परिचय १५/-

(लेखक हरिवंश वानप्रस्थी) योग के सम्बन्ध में सम्पूर्ण जानकारी देने वाला अमूल्य ग्रंथ)

५- हिन्दू इतिहास वीरों की दास्तान (लेखक राजेशार्य एम०ए०) द्वितीय संस्करण ७०/-

डा० सुरेन्द्र कुमार शर्मा अज्ञात द्वारा लिखित हिन्दू इतिहास हारों की दास्तान की प्रामाणिक समीक्षा

प्राप्ति स्थान

शांतिधर्मी कार्यालय

७५६/३ आदर्श नगर सुभाष चौक जींद-१२६१०२

भिवानी में हमारे अधिकृत प्रतिनिधि

हर प्रकार का वैदिक साहित्य व अन्य धार्मिक साहित्य प्राप्त करने के लिए पधारिए

दीप प्रकाशन

(वैदिक साहित्य के प्रकाशक एवं पुस्तक विक्रेता)

कृष्णा कालोनी, माल गोदाम रोड़ गली में, भिवानी-१२७०२१ (हरियाणा)

नोट :

शांतिधर्मी प्रकाशन द्वारा प्रकाशित साहित्य के लिए व शांतिधर्मी की वार्षिक, आजीवन सदस्यता के लिए भी संपर्क कर सकते हैं।

मोबाईल-६४१६१ ६४३७१

दिन में मिलने का स्थान-

आर्य समाज घंटाघर, भिवानी

ओ३म्

M.A. : 9992025406
P. : 9728293962

NDA No. : 236964
DL No. : 2064

अशोका मैडिकल हॉल

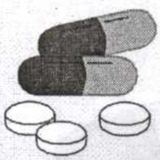

अशोक कुमार आर्य Pharmacist, आयुर्वेद रत्न
R.M.P.M.B.M.S.

हमारे यहाँ पर नजला, पथरी, ल्यूकोरिया, शारीरिक कमजोरी, दाद, खारीश का आयुर्वेदिक देशी जड़ी बूटियों द्वारा ईलाज किया जाता है;

विशेष : हमारे यहाँ जीवन दायिनी च्यवनप्राश मिलता है।

अशोका मैडिकल हाल नजदीक वैद्य रामचन्द्र हस्पताल, पटियाला चौक, जीन्द

आर्यसमाज जींद शहर का वार्षिक चुनाव सम्पन्न

वीना आर्या प्रधान चुनी गईं।

–रवीन्द्र आर्य द्वारा

आर्यसमाज का चुनाव गत दिवस श्री सत्यप्रकाश आर्य की अध्यक्षता में निर्विरोध सौहार्दपूर्ण वातावरण में सर्वसम्मति से इस प्रकार सम्पन्न हुआ।

सत्यप्रकाश आर्य : संरक्षक,
श्रीमती विनीता गुलाटी : संरक्षक
श्रीमती वीना आर्या : प्रधान
श्रीर अशोक आर्य : उपप्रधान
मा० मोहनलाल आर्य : उपप्रधान
मा० राजवीरसिंह आर्य : मंत्री
श्रीमती निर्मला आर्या : उपमंत्री
श्री जयन्त आर्य : कोषाध्यक्ष
श्रीमती संगीता आर्या : पुस्तकालयाध्यक्ष
श्र‍‍ रवीन्द्र आर्य : प्रचार मंत्री

ओ३म्

M- 98968 12152

रवि स्वर्णकार

हमारे यहाँ सोने व चांदी के जेवरात आर्डर पर तैयार किये जाते हैं।

प्रो० रविन्द्र कुमार आर्य

आर्य समाज मंदिर, रेलवे रोड़, जीन्द (हरि०)–१२६१०२

ओ३म्

शांतिधर्मी के सदस्य बनने और शुल्क जमा कराने के लिए मिलें।

प्रकाश मेडिकल हाल

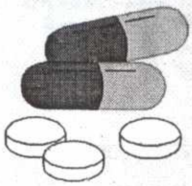

पटियाला चौक, जींद-126102

Regd. No. 108463

हर प्रकार की अंग्रेजी, देसी व आयुर्वेदिक दवाईयाँ उचित मूल्य पर खरीदने के लिए पधारिए।

Dr. S.P.Saini
(B.Sc. D. Pharma, आयुर्वेद रत्न)

M- 93549 55283
92552 68315

सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक चन्द्रभानु आर्य द्वारा अपने स्वामित्व में, ऑटोमैटिक ऑफसैट प्रैस रोहतक से छपवाकर, कार्यालय शान्तिधर्मी ७५६/३, आदर्श नगर, सुभाष चौक (पटियाला चौक), जीन्द-१२६ १०२ (हरि०) से २४-२-२०१३ को प्रकाशित।

ऋषि दयानन्द और हिन्दू समाज

पृष्ठ ११ का शेष---

'तो फिर उड़ा दो।'

धर्म रक्षिणी सभा मेरठ के प्रश्नों का उत्तर देते समय महर्षि लिखा--मैं निश्चय करके गंगा जी को श्रेष्ठ मानता हूँ क्योंकि और किसी नदी का ऐसा उत्तम और गुण सहित जल नहीं है, परन्तु गंगाजी को मुक्ति देने और पाप छुड़ाने का साधन नहीं मान सकता हूँ। आप जिनको परमेश्वर का अवतार कहते हैं, ये महा उत्तम पुरुष थे, परमेश्वर की आज्ञा में चलते थे, सत्य, धर्म और न्यायादि गुणों सहित थे, वेदादि सत्यशास्त्रों के पूर्ण जानने वाले थे। न आज तक कोई और ऐसा हुआ और न है; परन्तु आप जो इन उत्तम पुरुषों को परमेश्वर का अवतार मानते हो यह आपकी भ्रान्ति है। बड़े दुःख की बात है कि आप लोग यद्यपि रामचन्द्र जी और श्रीकृष्णादि उत्तम पुरुषों को परमेश्वर का अवतार मानते हो फिर भी उनकी परले सिरे की निन्दा और बुराई करने में संलग्न रहते हो। कोई कहता है वाह! वाह! साक्षात् राधाकृष्ण जी ही आ गये हैं। इन्ही कन्हैया जी ने हजारों गोपियों के साथ भोग-विलास किया है, १६००० रानियाँ रखी हैं, बहुत दूध माखन चुराकर खाया है, नहाते हुए नंगी स्त्रियों के कपड़े तक चुरा लिये हैं और उनका पहरों नग्न सामने खड़ा रखा है। अधिक और कहाँ तक तुम्हारी बातों का वर्णन करूँ! अब लज्जा भी रोकती है और बुद्धि भी आज्ञा नहीं देती। --हाय, हाय, इन बातों के वर्णन से मन पर इतना शोक और दुःख का भार है कि अधिक वर्णन करने की सामर्थ्य नहीं।

उपर्युक्त बातों को पढ़कर भी क्या कोई बुद्धिमान व्यक्ति यह सोच सकता है कि महर्षि दयानन्द सनातन धर्म की मान्यताओं का खण्डन करने वाले थे? हाँ, मिथ्या मान्यता चाहे किसी भी मत में रही हों, महर्षि उन सभी का खण्डन करते थे और उनका तो उद्देश्य भी यही था कि सभी मतों की विकृति दूर करके उन्हें पुनः उनके मूल धर्म (वैदिक धर्म) में मिला दें, क्योंकि उदयपुर में विष्णुलाल पंड्या को महर्षि ने कहा था कि एक धर्म, एक भाव और लक्ष्य बनाए बिना भारत का पूर्णहित और जातीय उन्नति होना दुष्कर कार्य है। सभी उन्नतियों का केन्द्र स्थल है एक्य। जहाँ भाषा, भाव और भावना में एकता आ जाए वहाँ सागर में नदियों की भाँति सारे सुख एक-एक करके प्रवेश करने लग जाते हैं। मेरी इच्छा है कि देश के राजा महाराजा अपने शासन में सुधार तथा संशोधन कर अपने राज्य में धर्म, भाषा और भावों में एकता उत्पन्न करें।'

पर क्या धर्म निरपेक्षता का ढोल पीटने वाली वर्तमान छद्म राजनीति इससे कुछ प्रेरणा लेगी?

MAHARSHI DAYANAND EDUCATION INSTITUTE

An Autonomous Institute Under the Control & Management of G.R.E.S.W. Society (Regd.) Bohal

202, OLD HOUSING BOARD, BHIWANI-127021 (HAR.)

I.T.I. की इलैक्ट्रिशियन, फीटर, वैल्डर, पलम्बर, मशीनिस्ट आदि सभी ट्रेड व अन्य डिप्लोमा कोर्स दूरवर्ती माध्यम से करने के लिए व अपने क्षेत्र में संस्थान का केन्द्र स्थापित करने के सम्पर्क करें।

संस्थान से I.T.I. कोर्स किये अनेक विद्यार्थी सरकारी/गैर सरकारी विभागों में कार्यरत हैं।

पंजीकृत कार्यालय सम्पर्क सूत्र :

09728004587, 09813804026

Website : www.grngo.org

सचिव : नरेश सिहाग, एडवोकेट

(पूर्व कानूनी सलाहकार, हरियाणा विद्यालय शिक्षा बोर्ड)

चैम्बर नं. 175, जिला अदालत, भिवानी-127021 (हरि.)

09255115175, 09466532152

दहशत ही है दहशत का समाधान

डॉ॰ विवेक आर्य, शिशु-रोग विशेषज्ञ, drvivekarya@yahoo.com

बीते मास हमारे देश में दो बड़ी घटनाएँ हुईं। सर्वप्रथम भारत की संसद पर हमला कर भारत की अखंडता और अस्मिता को चुनौती देने वाले आतंकवादियों के सरगना अफजल गुरु को फाँसी पर लटका दिया गया। दूसरी इस घटना के कुछ दिनों के पश्चात् हैदराबाद में बम विस्फोट कर मासूमों के प्राण हर लिए गए। अफजल गुरु को जिस दिन फाँसी पर लटकाया गया उसी दिन से पूरी कश्मीर घाटी में कर्फ्यू लगा दिया गया। कारण बताया गया कि अलगाववादियों द्वारा अफजल की फाँसी का विरोध होगा जिससे सामान्य हालात काबू से बाहर न हो जाये इसलिए सुरक्षा की दृष्टि से कर्फ्यू लगा दिया गया है।

एक प्रश्न मेरे दिमाग में अलगाववादियों की 1947 के बाद के भारत, विशेष रूप से कश्मीर में भूमिका को लेकर उठता रहता है। भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र है। उसका अपना संविधान है और जो भी भारतवासी उस संविधान का विरोध करता हैं, उसकी अवमानना करता है वह एक प्रकार से देश के कानून को तोड़ रहा है। अर्थात् एक प्रकार से अपराध कर रहा है। अलगाववादियों की भूमिका सदा से ही प्रश्नों के घेरे में है। कभी हिंदुओं को घाटी से निकाले जाने को लेकर, कभी अमरनाथ यात्रा को लेकर, कभी 26 जनवरी को श्रीनगर में लाल चौक पर तिरंगा फहराने को लेकर।

अलगाववादी सदा से ही भारत के कानूनों का विरोध करते हैं और पाकिस्तान का राग अलापते हैं। कश्मीर के एक विधायक ने तो यहाँ तक कह दिया कि भगतसिंह के समान अफजल गुरु के नाम पर श्रीनगर के एक चौक का नाम होना चाहिए।

कश्मीर के मुख्यमंत्री ने अफजल गुरु के शव को परिवार को सौंपने के लिए सरकार से कहा है। गृहमंत्री शिंदे ने कुछ दिन पश्चात् हुए हैदराबाद बम विस्फोट का कारण कसाब और अफ़जल गुरु को फाँसी देना बताया है। ऐसा उन्होंने कसाब की फँसी के पश्चात् तालिबान की धमकी के सन्दर्भ में कहा होगा।

प्रश्न यह उठता है कि क्या दहशत फैलाने वालों पर, देश की अखंडता को चुनौती देने वालों पर हमें कोई कार्यवाही इस डर से नहीं करनी चाहिये कि वे इसकी प्रतिक्रिया बम विस्फोटों के रूप में करेंगे? क्या मुम्बई में निहत्थी जनता पर गोली बरसाने वाले कसाब को फाँसी देना केवल इसलिए गलत है कि इसका अलगाववादी विरोध करेंगे? क्या संसद पर हमला करने की साजिश करने वाले अफजल को फाँसी देने से पहले संविधान को, कानून को यह देखना पडेगा कि कोई इसका विरोध तो नहीं करेगा? अपराधियों को सजा देने का काम कानून का है और उसको लागू करने का काम तथा उस सजा का विरोध करने वालों के साथ भी सख्ती से निबटने का काम सरकार का है।

दहशतगर्दों का एक ही समाधान है और वह है दहशत। यह दहशत किसके दिलों में होनी चाहिए-

-यह दहशत होनी चाहिए कसाब को आतंकवादी बनाने वाले उसके पाकिस्तानी आकाओं के दिल में!

-यह दहशत होनी चाहिए हैदराबाद में बम विस्फोट करने वालों के दिल में!

-यह दहशत होनी चाहिए किसी भी आतंकवादी अथवा देशद्रोह को सजा देने पर उसके समर्थन में मानव अधिकार की बात करने वालों के दिल में!

अमरीका ने 9-11 के पश्चात् दहशतगर्दों का जो समाधान किया उससे उसका रुख स्पष्ट था कि उसकी धरती पर जो भी मौत का तांडव करेगा वह उनके दिलों में मौत का तांडव करेगा। कहाँ ओसामा बिन लादेन को मारने पर पूरे अमरीका में खुशियाँ मनाई गई वहीं, भारत की कुछ मस्जिदों में ओसामा बिन लादेन की आत्मा की शांति के लिए प्रार्थना की गयी। किसी आतंकवादी की आत्मा की कईयों को फिक्र है, पर हैदराबाद बम विस्फोट में मारे गए निर्दोष लोगों की आत्मा की शांति के लिए प्रार्थना मुझे सुनने को न मिली।

आज आतंकवाद से निपटने के लिए एक ठोस और निर्णायक नीति बनाने की आवश्यकता है। पर वह नीति बनेगी तभी जब हमारी सरकारें यह निश्चय कर लेंगी कि आतंकवाद को समाप्त करना ही है।

स्वामी इन्द्रवेश विद्यापीठ टिटोली जिला रोहतक में बेटी बचाओ संकल्प हेतु आयोजित चतुर्वेद पारायण महायज्ञ के दृश्य। मंच पर स्वामी प्रणवानन्द जी, स्वामी आर्यवेश जी, स्वामी चन्द्रवेश जी व अन्य विद्वान।

पुस्तकें मंगाने वाले ग्राहकों के लिए जानकारी
मनोहर आश्रम की लोकप्रिय पुस्तकें छपकर तैयार हैं

सर्वजन हिताय! सर्वजन सुखाय!! के उद्देश्य से–

डॉ. मनोहरदास अग्रावत एन.डी. 'आयुर्वेद शिरोमणि'

द्वारा लिखित प्राकृतिक चिकित्सा की शोधपूर्ण पुस्तकें–

1- जीवन रक्षा, पृष्ठ 202 मूल्य 85 रुपए
2- स्वास्थ्य ज्योति, पृष्ठ 162 मूल्य 75 रुपए

इन स्वास्थ्य विषय की पुस्तकों पर–मध्य प्रदेश, राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, बिहार और दिल्ली से चिकित्सकों के प्रशंसापत्र प्राप्त हैं। बिना ऑपरेशन पथरी, मोतियाबिन्द, बवासिर (मस्सा) आदि रोगों की सरल चिकित्सा एवं बालक, स्त्री, पुरुषों के प्रत्येक राग के सरल उपचार इन दोनों पुस्तकों में लिखे गए हैं। सर्पविष व बिच्छु विष उतारने के सरल व सफल उपचार हैं। दोनों पुस्तकें एक साथ मंगाने पर इनका मूल्य 160 रुपए। डाक मनिआर्डर से भेजने पर आश्रम की ओर से रजिस्ट्री डाक खर्च रुपए 25 होता है वह लगाकर पुस्तकें आपको भेज दी जाएंगी। वी.पी. भेजने का नियम अब नहीं है।

हमारे मो.बा.नं. 08989742047

हमारा पता- व्यवस्थापक-'मनोहर आश्रम' स्थान-उम्मैदपुरा
पो. तारापुर जावद)-458330, जिला-नीमच (म.प्र.)

R.N.I. No. 70866/99 शान्तिधर्मी हिन्दी मासिक (मार्च, २०१३) P.R. No. : PKL 150-A/2011-13

e-mail:induspublicschooljind@gmail.com
website:www.induspublicschooljind.org
01681-249705
01681-246632

Indus Public School, Jind

Announces

ATTRACTIVE SCHOLARSHIP

Scheme for STUDENTS seeking Admission in Class XI.

Admission in progress for Pre- Nursery to IX & XI

Top 10- Rs. 10,000/-
Next 10- Rs. 7,500/-
Next 10- Rs. 5,000/-

Date & Time of Scholarship Test
19th March, 2013
& 29th March, 2013
at 9:30 a.m.

SCHEME FOR STUDENTS OF ALL BOARDS

Why Indus?

- Overall Champion In Inter School CBSE Competitions In Distt. Jind
- City Topper in Distt. Jind- Sahil Dhanda (10+2 Non- Medical)
- Sahil Dhanda & Sahil Deswal got selected in NDA
- Rimpi, Anju & Anjali got admission in MBBS
- Preeti, Sahil Kansal and Sumit have cleared CPT (CA)
- Many students got Gold Medals in Taekwando & Karate
- 25 Students got admission in prestigious Engineering Colleges in the Country
- Fencing Team Secured First Position at State Level
- School Dance Group Comprising of 150 students bagged Ist Position in Independence Day Celebration
- Qualified, Well Experienced, Caring and Dedicated Staff
- Digital Educom Smart Classes
- Play Way Techniques in Kindergarten
- Moral Values Inculcation through counselling
- Fully Air-conditioned Junior Wing

ATTRACTION:

Faculty from **V Plus U**, Jind for **SUPER 50 STUDENTS** of classes XI and XII during School Hours

Mr. Vinod Kumar - Chemistry
Mr. Ramesh Chahal - Physics
Mr. Digvijay - Mathematics